१९७३

उद्बोधन

ॐ

ओऽऽऽम् तमसो मा ज्योतिर्गमय, असतो मा सद्गमय,
मृत्योर्मा अमृतम् गमय।

संरक्षक :

परम पूज्य श्री सत्गुरू

-: सम्पादक मण्डल :-

डॉ. (श्रीमती) के. के. पंघेर

मनोहर तेजवानी

जितेन्द्र दीवान

भूमिका :

कितने भाग्यवान हैं हम सभी, कि हमें ऐसा दुर्लभ मानव-जन्म प्राप्त है जो बार बार नहीं मिलता। केवल इसी जन्म में प्राणी अपने आपको पहचान सकता है। अपने जन्म के हेतु एवं परिणाम को जान सकता है एवं अपने उद्धार के बारे में सोच सकता है।

आहार, निद्रा, भय एवं प्रजनन तो सभी प्राणियों में समान है परन्तु प्रकृति की देन "बुद्धि" के कारण मनुष्य सभी प्राणियों में विशेष है तथा प्राणी मात्र की मूल प्रवृत्तियों की दासता से अपने आपको मुक्त करके, अपना एवं अपने साथ-साथ अपने कुटुम्ब, समाज, प्रांत व राष्ट्र का भी कल्याण कर सकता है। सारे सांसारिक प्रपंचों को छोड़कर नहीं, वरन् सभी प्रापंचिक कर्त्तव्यों का पूर्ण निर्वाह करते हुए भी आत्म ज्ञान की प्राप्ति कर अपने दिव्य जीवन को सफल कर सकता है।

क्या मानव जीवन पाकर भी हम यह सब कुछ कर पाये हैं? नहीं। क्योंकि हमारे सभी प्रयत्न अपने शारीरिक सुख एवं भौतिक उपलब्धियों की प्राप्ति के लिये होते हैं और जीवन में हम तब तक इसी में उलझे रहते हैं जब तक कि कोई ऐसा सत्पुरुष, सद्गुरू नहीं मिल जाता जो हमारे जीवन की दिशा मोड़ दे। हमें अपनी आत्मिक शक्ति से परिचित करवाकर आत्मिक विकास के पथ पर अग्रसर कर दे।

यह हमारा परम सौभाग्य है कि हमें एक सच्चे, समर्थ सत्गुरू का सफल मार्ग-दर्शन एवं संरक्षण प्राप्त है जिन्होंने एक गृहस्थ का जीवन व्यतीत करते हुए भी अपनी साधना द्वारा परमोत्कर्ष की प्राप्ति की। श्री गुरू ग्रंथ साहिब के इस वाक्य के अनुसार कि "जिन हरि जपया सें हरि होये" हमारे सत्गुरु में तथा उस परमेश्वर में कोई भेद नहीं है जिसका चिन्तन वे प्रतिपल करते हैं। यही कारण है कि आज हर उम्र, हर रंग, हर जाति, हर धर्म एवं हर सम्प्रदाय के मुमुक्षु अपनी-अपनी अवस्था के अनुसार उनसे मार्गदर्शन प्राप्त कर रहे हैं तथा स्वरूपानुसंधान के पथ पर शनैः शनैः आगे बढ़ रहे हैं।

आइये ऐसे सत्गुरू के सानिध्य का हम भरपूर लाभ उठाते हुए अपनी आत्म-शक्ति को विकसित करें ताकि बुद्धि के विकार स्वय नष्ट हो जायें। जन्ममरण का भय समाप्त हो जाये तथा आत्मा के, आत्मज्ञान के प्रभाव से बुद्धि स्फटिक मणिवत हो जाये।

सत्गुरू का आश्वासन है कि ऐसी स्थिति प्राप्त होने पर सर्व व्यापी आत्मा के गुण हममें स्वयं प्रगट होंगे तथा हमसे फिर जो भी कार्य होंगे वे अवश्य कल्याणकारी ही होंगे।

उद्बोधन पत्रिका का यह पंचम अंक सत्गुरू के प्रवचन, उनके प्रेरक उद्बोधन तथा शिष्यानुभवों के साथ जिन-जिन हाथों में पहुचेगा उन्हें सत्-पथ पर चलने की प्रेरणा अवश्य देगा और यही होगी इस पत्रिका के प्रकाशित करने की सार्थकता।

प. पू सत्गुरुजी के ८६वें जन्मोत्सव पर समस्त गुरू परिवार को शुभकामनाएं।

डॉ. (श्रीमती) के. के. पंधेर
सम्पादक

जुलाई २३, १९९३

दो शब्द...

आज सारा विश्व अशान्त है उस पर ये मानव, जो जन्म से बहिर्मुखी है, भौतिक सुखों के पीछे भागता फिरता है। सुबह-शाम भागता ही रहता है। भागते - भागते जब थक जाता है तो उसके मन में प्रश्न उठता है – इस भागदौड़ से मुझे क्या मिला? उत्तर मिलता है – कुछ भी नहीं। तब वह रूककर अपने बारे में सोचता है और पाता है कि उसे शांति चाहिये। "जनम जनम के पुण्य जब उदय होंय इक संग, जावे मन की मलिनता तब भावे सत् संग" – तब वो निकल पड़ता है शांति की खोज में। फिर प्रश्न उठता है- शांति कैसे मिले? पाता है- उसे कोई तो मार्गदर्शक चाहिए। सद्गुरू चाहिए, सत्पुरूष चाहिए- तो निकल पड़ता है खोजने। और यहां-वहां भटकने के बाद उसे सद्गुरू, सत्पुरुष मिल जाता है। सद्गुरू पाने पर सबसे पहले जो अनुभव करता है वह है 'शांति'। साथ में सद्गुरू की आशीष पाता है जिसे ग्रहण कर 'माया' के बन्धन से छूटता चला जाता है। यहां तक कि उसकी बुद्धि के विकार भी दूर होते चले जाते हैं, "संशय भी निरमूल" हो जाता है आगे चलकर।

इन्हीं बिन्दुओं पर परम पूज्य गुरूजी के प्रवचन इस पत्रिका में प्रकाशित किये जा रहे हैं। कैसेट में टेप प्रवचनों को सुनकर शब्दांकित करने व प्रस्तुत करने में सम्भवतः हमसे अनेकों त्रुटियां हुई हों, इसके लिये हम प. पू. गुरूजी एवं समस्त पाठक - गण से विनम्रता पूर्वक क्षमा - याचना करते हैं।

० विषयानुक्रमणिका ०

क्रमांक	विषय	पृष्ठ संख्या
१–	वन्दना	
२–	प्रवचन	
	(अ) संशय निरमूल क्यों नहीं होता ?	१
	(ब) आशीष फलित क्यों नहीं होती ?	६
	(स) शांति क्यों नहीं मिलती ?	११
	(द) माया और विज्ञान	१७
	(इ) What is Here and There ?	२०
३–	प्रेरक उद्‌बोधन	२१
४–	दीक्षा के बाद क्या पाया ?	२४
५–	तुम्हें नहीं पहिचाना हमने (स्तुति)	२८
६–	सत्‌गुरू महिमा अनत है (शिष्यानुभव)	३०
७–	आर्थिक सहयोगियों की सूची	५४

॥ वन्दना ॥

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु, गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुरेव परब्रह्म, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

अज्ञान तिमिरांधस्य, ज्ञानांजन शलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितम् येन, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

अखंड मंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदम् दर्शितम् येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

ब्रह्मानंदम् परम सुखदम् केवलम् ज्ञान मूर्तिम् ।
द्वंद्वातीतम् गगनसदृशम् तत्वमस्यादिलक्ष्यम् ॥

एकम् नित्यम् विमलमचलम् सर्वधी साक्षिभूतम् ।
भावातीतं त्रिगुण रहितं सद्गुरुम् तम् नमामि ॥

यं ब्रह्मा वरुणेंद्र रुद्र मरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवैः ।
वेदैः सांगपदक्रमोपनिषदैर्गायंति यं सामगाः ॥
ध्यानावस्थित् तद्गतेन मनसा पश्यंति यं योगिनो ।
यस्यांतम् न विदुः सुरासुरगणाः देवाय तस्मै नमः ॥

卐 卐 卐

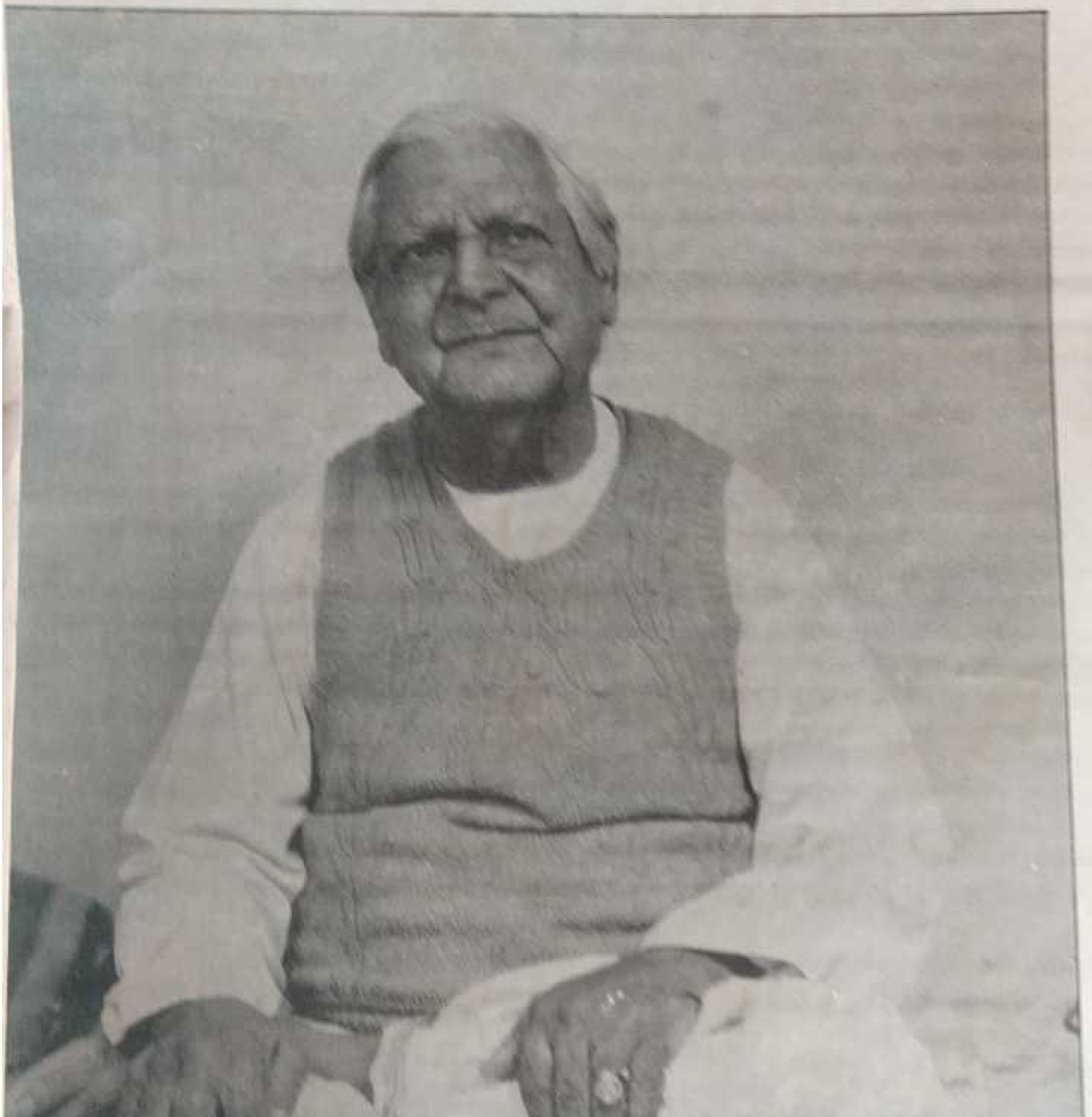

रम पूज्य श्री सतगुरुजी "श्री वासुदेव रामेश्वर जी तिवारी"

संशय निरमूल क्यों नहीं होता ?

ओऽऽम् तमसो मा ज्योतिर्गमय,
असतो मा सद्गमय,
मृत्योर्मा अमृतम् गमय ।

उपनिषद के ये सूत्र हैं । अभी हमारे परिवार के लोग समय पर विषय, सम्पूर्ण विषय को अपनी-अपनी बुद्धि और अनुभव के आधार से आप सब लोगों को निश्छल, निष्कपट प्रगट किया । और ये भी कहा कि जब तक कोई मार्गदर्शक न मिले तब तक कार्य नहीं चलता है । माने Without a true Guru none has found God जब तक कोई सत्पुरुष न मिल जाय, सद्गुरु न मिले तब तक जिसको ईश्वर कहते हैं उसका बोध कभी भी नहीं हो सकता है । ये बात उतनी ही सत्य है । लेकिन हम अभ्यास करते हैं । अभ्यास सभी लोग करते हैं । हम भी करते हैं, आप भी करते हैं, सभी सम्प्रदाय के लोग करते हैं । मानव प्राणी मात्र इस सुख-दुख, जन्म-मरण आदि से छुटकारा पाना चाहता है । वो सब ठीक है । अभ्यास भी निरंतर होना चाहिए । अन्तर रहित अभ्यास होना चाहिये । जिसको इस जंजाल से छुटकारा पाना है तो निरन्तर अभ्यास होना चाहिये । उसकी भूमिका दृढ़ होना चाहिये । "सत्कारा सेवितो दृढ भूमिः" । "स तु दीर्घकाल नैरन्तर्य सत्कारा सेवितो दृढ भूमिः" । निरंतर हो करके, अन्तर रहित हो करके सत्कार और सेवित ये दो विशेषण हैं । अगर ये दो विशेष बात आप में नहीं है तो आपकी भूमिका दृढ कभी हो नहीं सकती । अब, ये भूमिका दृढ क्यों नहीं हो सकती है ? उसका एक और बड़ा सुन्दर नाम है । वो नाम किसी ने अभी नहीं लिया । बस, उतना ही बचा है हमको कहने के लिये । बाकी सब कुछ, सब कुछ कह गये हैं । आप सब लोगों ने सुन लिया है । और वो एक पद हमारे सामने आया है जिसमें दो पंक्तियाँ याद हैं । बस, उतना ही कह करके आप से हम विदा लेंगे ।

"अभ्यास वैराग्याभ्याम् तन्निरोधः"–अभ्यास और उसी अभ्यास में जो तत्व दिया गया है । आपको, चाहे विषय कोई भी हो - भौतिक हो - या पारमार्थिक, लोकिक हो या पारलोकिक, जब तक उसमें आप रंग नहीं जायेंगे तब तक वो आत्मसात् होने का नहीं । जब तक आत्मसात होने का नहीं, तब तक वो आपका नहीं । वो दूर है, आप भी दूर हैं । वो आपको प्राप्त नहीं, यद्यपि प्राप्तव्य है । फिर भी प्राप्त हो नहीं सकता । तो एक दो सूत्र आपके सामने रखता हूँ । वो कहते हैं - बड़ा प्रज्ञावान है उसको बुलाओ भई, कुछ प्रकाश डाल देंगे । "प्रकाश क्रिया स्थितिशीलम्" । तो, ये प्रकाश डालना सतोगुण है । आपको जो विषय नहीं मालूम, उसको दूर करके आपके सामने स्पष्ट कर देना ताकि आपको समझ में आ जाये और समझ में आ गया तो आधा कण्ठ हो गया । अभ्यास करने पर वो आपका हो ही जाता है । आपका हो जाना, अभ्यास में एक स्थिति है । हमारे डा. साहब कहते कहते - कहते निर्बीज समाधि तक चले गये । लेकिन वो निर्बीज समाधि कैसा है, किस तरह है, इस संबंध में संत तुलसीदास जी का एक पद है । वो पद बहुत सुन्दर है । बहुत उत्तम है । पूरा तो

नहीं कहूंगा। इस विषय के आधारसे जो पंक्तियां है वो आपके सामने रखेंगे।

"रघुपति भगति करत कठिनाई"। आप लोग सुने हैं "रघुपति भगति करत कठिनाई"। रघुपति शब्द है दाशरथी पुत्र राम, उन्हे रघुपति कहा। ये श्लेषार्थ है। अब अगर व्याकरण की दृष्टि से देखा जाय, ग्रामर के हिसाब से देखा जाय तो रघुपति जो शब्द है, उसमें पति नाम स्वामी, पति नाम ईश है। पति नाम जो सबसे पहले था। सबसे पहले सत् था सत्। "सदेकमेवम् अग्रमासीत नेहना - नास्किंचन" - एक सत् पहले था, अभी भी है आगे भी रहेगा। बाकी ये नाना कुछ भी नहीं था। ये सत् क्या है ? ये सत् Energy है। ये सत् शक्ति है। ये महाशक्ति है। ये शक्ति निराकार है। शक्ति को आज तक किसी ने देखा नहीं है। लेकिन शक्ति से कार्य का आप अपना संबंध करते हैं। शक्ति के बिना तो आप पलक नहीं मार सकते हैं। शक्ति के बिना आप अपने हाथ पैर हिला नहीं सकते हैं। बोल नहीं सकते हैं। लेकिन, मैं करता हूं, मैं करता हूं। शक्ति करती है कार्य, लेकिन कहते हैं मैं करता हूं। ये "मैं" जो है, बड़ा कठिन है। तो "मैं अरु मोर तोर तैं माया, जेहि बस कीन्हे जीव निकाया" - ये मैं और मेरा, "तैं और तेरा, माया का कोई और स्पष्टीकरण, विश्लेषण नहीं है, Definition नहीं है। मैं और मेरा, तैं और तेरा - उसी का नाम है माया। अच्छी तरह समझ लीजिए आप। इससे दूर होने के लिये आपको अभ्यास करना होगा और इस अभ्यास को बहुत सुन्दर बताया है तुलसीदास जी ने। रघुपति - रघु शब्द की लंघ, धातु से व्युत्पति हुई है। लंघ माने लांघना। ल, घ अनुस्वार, उसमें स्वर नहीं है। इसको लोप कर दिया गया है, हटा दिया गया है। लंघ - लं-घ+ उ, उ के आगे प्रत्यय लाया है। ककार में भी स्वर नहीं है, उसको भी लोप कर दिया है। अनुनासिक, अचरित "उ" ये रह गया है। अब लकार, लस्य, रश्च, लकार का रकार ये आदेश हुआ। तो र, घ और वो अनुनासिक अस्तु हलोलन्तरा संयोग। जब ये तीनों हलों का संयोग कर दिया है तो रघु बन गया। लंघ माने दशेन्द्रियाणि मनः तेषामीषः। दसों इंद्रियां और मन, अभी हमारे बाबा साहब जी बोल गये हैं - "प्रकाशक्रियास्थितिशीलं भूतेन्द्रियात्कम् भोगापवर्गार्थम दृश्यम्" ये जो दृश्य है इसमें अगर आप संलग्न हो जाय तो संस्कार आप में रहेंगे। संस्कार आपके ही बंधन हैं। ये दृश्य अगर दूर से देखा जाय और आनन्द ले लिया जाय तो आप, "अपवर्ग नाम मोक्ष" है, आपको मुक्ति मिल सकती है। संसार में रह करके आनंद से अपना जीवन व्यतीत कर सकते हैं। यही दृश्य बंधन का कारण है। यही दृश्य मुक्ति का कारण है। लेकिन कब ? एक शब्द है वो हम सबमें है। वो किसी को भी नहीं छोड़ी है।

"रघुपति भगति करत कठिनाई'। अब ये "दशे न्द्रियाणि मनः तेषामोषः" कैसे वश में लाया जाय। "स्वविषया सम्प्रयोगे चितस्य मनसैवेन्द्रियाणाम् प्रत्याहारः" - जब तक आपकी इंद्रियां बाहर की वस्तुओं से उनका संबंध हटा नहीं पाती हैं "प्रयत्न शैथिल्यानन्त्य समापतिभ्याम्" - प्रयत्न से ये सब होते हैं। अगर आप प्रयत्न करेंगे, अभ्यास करेंगे तो बाहर की वस्तुओं से आपकी इंद्रियां अवश्य हट जायेंगी। इंद्रियां जहां हट गई जैसे डा. साहब ने कहा – वे अपने गोलक में चली जायेंगी। अपने गोलक में चली जायेंगी माने श्वसन संस्था, रक्ताभिसरण संस्था, विचार संस्था जो हमारे मस्तिष्क में उदय अस्त होते रहते हैं। उदय, अस्त, श्वसन और रक्ताभिसरण – ये चार

एक ही साथ हैं। एक बात और है • जैसे चींटा अपने को काट दिया, मक्खी ने काट दिया, कहाँ काट दिया, किधर काट दिया झट संदेश मिल जाता है, यहां है। ऐसा जो गति तन्तु और ज्ञान तन्तु हैं ये छहों अभ्यास के द्वारा धीरे-धीरे चित्त नाम "प्रकाशक्रियास्थितिशीलम्" – गुरुजी के बताये हुए मार्ग से, गुरुजी के बताये हुए आधार से जब तक आप सक्रिय निरंतर न बने रहेंगे तब तक ये स्थिति नाम तमोगुण कभी दूर नहीं होते। भई क्या करता है, ऐसी स्थिति हो गई कि नही पहुंच सका, ऐसी परिस्थिति बन गई इसलिये हम नहीं आ सके, माने कितने बहाने बाज हैं हम। कितने सत्य बोलते हैं हम। इसलिए इससे दूर होने के लिये आपको अभ्यास करना है और ये बड़ा कठिन है अब उसके केवल हम वर्णन कर देते हैं और आगे चलकर नहीं बोलेंगे कुछ।

तुलसीदासजी कहते हैं कि "सकल दृश्य निज उदर मेलि" प्रत्याहार जब हो जाता है माने इन्द्रियां वस्तुओं से परे, मन इंद्रियों से परे, बुद्धि मन से परे, बुद्धि आत्मा, आत्मा बुद्धि से परे और आत्मा जो है, वही "स" है। "बुद्धे आत्मा परतस्तु स:"। स: माने वह एक सत्, जिसने इस सारे संसार को उत्पन्न किया, पालन पोषण करता है और उसको अपने आप में समाहित कर लेता है। वो पहले भी था, अभी भी है और आगे भी रहेगा। अनादि कहा है इसे। ये कब से हुआ है, कब तक रहेगा ये कोई भी नहीं जानता। चाहे पाश्चात्य वैज्ञानिक हों और चाहे पौर्वात्य मनीषीगण हों आज तक सभी ने अनादि कह दिया और अनादि, आज पता ही नहीं है अपने को। कब से और कब तक नहीं है। इसलिये ये दो तो बराबर है। अभी बाबा साहब तक वाले ने कह दिया, क्या कह दिया कि ये भूतेन्द्रियात्मकम् भोगापवर्गार्थम्" माने ये चाहिये तेवीस तत्व, चौबीस तत्व और आत्मा इन दोनों मिल करके। आत्मा चेतन है बाकी ये जड़ हैं। आत्मा की चेतनता से, बुद्धि जड़ है तो बुद्धि में चेतन सी हो रही है। किया है जिसके कारण से आत्मा चेतन है। बुद्धि जड़ है। आत्मा निर्मल है, बुद्धि मलिन है। बुद्धि भोग्य है। आत्मा भोक्ता है। क्यों भोक्ता है कि मैं अपने पर आरोप करता हूं। मैं सुखी हूं, मैं दुखी हूं, मैं पापी हूं, मैं फलां हूं, मैं यूं हूं, मैं त्यू हू, मैं यूं हू अपने आप पर आरोप करते करते करते सारा जीवन व्यतीत कर देता है। और आरोप जो आत्मा पर करते हैं वे आत्मा से कभी मुक्त होते नहीं। अच्छा भला क्यों नहीं सोचते, क्यों सोचते हैं ऐसी बातें। गिरने की बातें क्यों सोचते हैं आप। अच्छी बातें सोचो, कितनी अच्छी बात होगी। तो तात्पर्य ये है कहने का, कहा गया है-"इंद्रेभ्य परेभ्यर्था अर्थेभ्यश्च परं मन:, मनसस्तु परे बुद्धे, बुद्धे आत्मा परतस्तु स:"। वो जो स: है वही ये जीव है दूसरा नहीं। पर तुलसीदास जी कहते हैं कि "सकल दृश्य निज उदर मेलि"– प्रत्याहार के बाद, अभी बताया आपको जब कुछ नहीं रह जाता, तो उर्दू में ऐसा कहा गया है कि "खुद को ऐसा मिटा कि तू न रहे, तेरे हस्ती की रंगों बू न रहे"। अभी देखिये, आप लोग अभ्यास करते हैं। आपको लाइट, ज्योति वगैरह ये सब दिखाई देते हैं लेकिन आपके चरित्र में, आपकी बुद्धि में भय, आशंका ये सब बातें बनी रहती है। क्यों बनी रहती? शायर ने कहा है, इकबाल शायर ने कहा है कि निकल जा, क्या निकल जा, कहां, निकल जा "अक्ल से आगे"। बुद्धि जड़ है, बुद्धि से भी आगे निकल जा। जब तक आप सोचते हैं ये दिखता है, ये सब बौद्धिक है। ये सब मिटने वाले हैं। "दृष्टम तन्नष्टम"· ये जो दिखता है सब

नाश होने वाला है। इसलिये आयें निकल जा। यें नूर रह गुजर है मंज़िल नहीं। ये जो प्रकाश आपको दिखाई देता है, ये आपको एक आधार है। इस आधार से आपको बल मिलता है। आपका विश्वास बढता है। आप भरोसा करते है, अपने गुरुजी पर और अपने पर। और जो विषय आपको दिया गया है, उस पर भी भरोसा हो जाता है। तो तीनों पर जब आप निर्भर हो जाते हैं, तब जा करके धीरे धीरे ये प्रकाश आपको मंजिल देता है माने जो गोल है। The Goad must manifest within आपके भीतर ही है बाहर नहीं है। बाहर आप ढूंढते हैं, मारे - मारे फिरते हैं। कोई आवश्यकता नहीं है बाहर फिरने की। अन्दर ही अन्दर है सब में। आप बैठ करकें देख तो लीजिये। एक चालीस दिन बैठ के देखो। कछ न बोलो, खाली चुपचाप बैठे रहो। देखो, फिर क्या होता है। तो तात्पर्य ये है – तुलसीदास जी कहते हैं कि जब ये स्थिति हो जाती है - बाह्य संवेदना शून्यत्व। जब बाहर कोई संवेदना नहीं रह जाती है तब सारे दृश्य अन्दर चले गये। तो क्या होता है – "सोवे निद्रा तजि जोगी"। वो योगी आत्मस्थ हो गया। योगी माने योग, आत्म योग। बुद्धि को आत्म यौग हो गया और बुद्धि भी आत्मस्थ हो गई। बुद्धि भी नहीं रही। तो "सोवे निद्रा तजि जोगी" – योगी जो सोता है उसको तो निद्रा नहीं है। Wide awakened stage जिसको कहते हैं। वो सदा जागृत अवस्था में रहता है। वो कभी सोता नहीं, ये बिलकुल सत्य बात है। अनुभव कें बोल हैं ये सब। तो तात्पर्य ये है कहने का, कि "सोवे निद्रा तजि जोगी"। क्या चीज आना चाहिये तब आपके पावर होगा। ये एक शब्द रह गया है बोलने में। सभी कुछ बोल गये हैं। एक शब्द नहीं बोले वो शब्द आपके सामने रखता हूं मैं।

सोक मोह भय हरष दिवस–निसि, देस काल तहं नाहीं" – निर्वीज समाधि का ये विश्लेषण है। ये Definition है कि "सोक मोह भय हरष दिवस – निसि, देस – काल तहं नाहीं, तुलसीदास यहि दसाहीन संशय निरमूल न जाहीं" - ये संशय जब तक कि आपका निर्मूल नहीं होता, जब तक ये स्थिति आपको प्राप्त नहीं होती, जब तक जीते जी मर न जाओ। तुकाराम जी कहते हैं-"आपणें मरण पाहिल्या म्या डोल्या" (मैं अपनी मौत को कई बार अपनी आखों में देखा)। रामदासजी ने भी देखा। ज्ञानेश्वर ने भी देखा। तुलसीदास जी ने भी देखा। सूरदास ने भी देखा। कृष्ण ने भी देखा। राम ने भी देखा। ये जितने लोग हुये हैं सबने अपनी मौत को देखा। बिना मौत देखे संशय दूर होता नहीं। तो एक संशय शब्द रह गया था सबों के भाषण में। तो जब तक ये अभ्यास करते करते करते "सोक मोह भय हरष दिवस–निसि, देस काल तहं नाहीं" माने Above time and space जब तक ये स्थिति आपकी नहीं हो जाती तो "तुलसीदास यहि दसाहीन", ये दशा अगर नहीं हुई तो "संसय निरमूल न जाहीं"। संशयात्मा बिनश्यति। तब तक कि नहि, कि नहि कि नहि। हम हों, हमारा बाबा हो या हमारा बाबा का बाबा हो। ये हम आपके सामने निर्वीज शब्द का एक Definition (विश्लेषण) आपके सामने रखा। बाकी समय बहुत हो गया है। अब आपका समय न लूंगा। तो यहां मै –

– गुरु - पर्व / ग्वालियर- 23-7-92

१. हरि ओम् स्वस्तिनों इंद्रो वृद्धश्रवा, स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदा स्वस्तिनः तार्क्ष्यो अरिष्टनेमि स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु ।

२ ओम् द्यौ शांतिः पृथिवी शांतिः आपः शांति ओषधयः शांति वनस्पतयः शांतिः विश्वेदेवा शांतिः ब्रह्म शांतिः सर्वंग्वं शांतिः शांतिरेव शांतिः सा मा शांतिः रेऽधि सुशांतिर्भवतु । ओम् शांतिः शांतिः शांतिः

३. सर्वेऽपि सुखिनः संतु सर्वे संतु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुख भागभवेत् ।

※ ※

"सम्प्रज्ञात समाधि"– आप कार या बस में बैठते हैं। दुर्घटना (Accident) हो सकती है, हो जाती है पर आप सोचते नहीं इस बारे में और आराम से बैठकर चले जाते हैं। इसी प्रकार चुपचाप मौन हो जाना है। अपने आप सब कार्य होता है। वहां बुद्धि की वृत्ति-तर्क, विचार, हमता ममता सब समाप्त हो जाते हैं। हम निर्विकार, निर्विकल्प हो जाते हैं। यह सम्प्रज्ञात समाधि है। याने बाहर का सब समाप्त हो जाता है और अपने आप उसको सब दिखाई देने लग जाता है। इसको कहा गया है –

"कर्मसंयमात् अतीत अनागत ध्यानं।"

※ ※

जागृति स्वप्न सुषुप्ति माने सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण – इन तीनों पर जब संयम हो तब मृत्यु आती है। मृत्यु को लांघने के बाद उसे ज्योति (Search Light) दिखती है। सब दिखता है। अपने सगे-सहोदर, लेना-देना, भूत-भविष्य सब दिखता है। नजर आता है अनेक जन्मों का। जिसे वो साक्षी भाव में होकर देखता है। "बोधाभ्यास साक्षीत्वम्- वो साक्षी हो जाता है। उसका कोई परिणाम नहीं होता है। सुख-दुख नहीं होता है। दिखता सब है। वो भी भोग है। आंखों से देखकर भोगता है लेकिन परिणाम नहीं होता। आप बैठे हैं। सायकिल वाला जा रहा है। गिरता है और आपको धक्का लगता है। क्यों लगता है? क्योंकि हम मार खा चुके हैं कई दफे। वहां ऐसा झटका नहीं बैठता है।

※ ※

आशीष फलित क्यों नहीं होती ?

किसी व्यक्ति का नाम आशीष रख दिया, अच्छी बात हैं। हमारी आशीष अलग है। आपने जन्म लिया, इसलिये जन्म लिया कि आप संसार से उऋण हों। माता पिता से भी उऋण हों और कर्त्तव्य पथ पर आप दृढ़ हों। आप सदाचारी हों। सच्चरित्र हों। सत्य में ही जीवन आपका रहे, ऐसी मेरी स्नेहपूर्ण आशीष है। वैदिक तो ये है -:

ॐ स्वस्तिनो इंद्रो वृद्धश्रवा स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदा।
स्वस्तिनः तार्क्ष्यो अरिष्टनेमि स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु ॥
ॐ द्यौ शांतिः पृथिवी शांतिः आपः शांतिः ओषधयः शांतिः
वनस्पतयः शांतिः विश्वदेवा शांतिः ब्रम्ह शांतिः सर्वंग्वं शांतिः
शांतिरेव शांतिः सा मा शांति रेऽधि सुशांतिर्भवतु
ॐ शांतिः शांतिः शांतिः।

ये आशीष है। आशीष को वहन करने के लिये, जैसे आपके विज्ञान में बताया गया है कि जो शक्ति विश्लेषण करके पायी जाती है उसको रखने के लिये Nucleous के रूप में सशक्त होना चाहिये। पहला आइटम जो निकाला और मिलाया वो Nucleous में रखने के लिये, वरना वह बिखर जायेगा, चला जायेगा। तो धारण करने वाली जो चीज होती है वो भी सशक्त उसी तरह समर्थ होना चाहिये। इससे जो मैंने अभी आशीष दिया इस विज्ञान के आधार से Example देकर, आपको इस आशीष को धारण करने की क्षमता होनी चाहिये। आशीष सभी देते है वो फलीभूत होती है। लेकिन वो फल क्यों नहीं मिलता हमको, क्योंकि हम उसको धारण नहीं कर पाते हैं। धारण माने हम उसको रख नहीं पाते और रख करके उसका उपयोग नहीं कर पाते क्योंकि हम जानते ही नहीं कि हमें क्या मिला और क्या नहीं मिला।

आधुनिक काल में विद्या अध्ययन में, अभ्यास काल में ये आशीष का कोई भी स्थान नहीं है। आधुनिक काल में विद्यालयीन प्रशिक्षण हमारा होता है इसमें आशीष का कोई स्थान नहीं है। बिलकुल नहीं है। Good Morning, Good Evening, Good Bye, Bye - Bye इसमें कुछ भी नहीं है। आशीष-यह एक शक्ति है। शीष नाम सिर। "आं" उपसर्ग है। उसका अर्थ होता है स्मरण। आपने अपने मस्तिष्क, बुद्धि, चित्त और मन के द्वारा अपने जीवन में जो संकल्प कर लिया है जिससे आप उद्यत हो गये हैं, आरंभ हो गये हैं तो परिणाम वही आना है। परिणाम के प्राप्त होने पर आप जिस पद से विभूषित होना चाहते हैं उसके लिये आप सज्जनों से, संत जनों से, देव शक्ति संपन्न जनों से, विप्रजनों से या साधु संत कहिये या माता-पिता से कहिये या जिन्होंने अपनी आत्मा समझ के पालन पोषण किया है और आपको सदा सर्वदा उन्नति के पथ पर, उन्नत

पद पर जाकर विभूषित हो, ऐसा जिन्होंने आपका पालन पोषण किया, वे आपको आशीष देते हैं।

गुरू पांच है। पहला गुरू मां है। दूसरा है पिता। तीसरे, अतिथि जो आते जाते है, देश विदेश के अतिथि आते हैं वे हमको संस्कार,संस्कृति का भेद और उनके रहस्य बताया करते हैं वो भी गुरू हैं। चौथा होता है आचार्य, जिनसे आप पाठशाला में जाकर पढ़ते हैं। और पांचवा,जिनसे अपना कल्याण होता है, आत्म-कल्याण। भारत में इस विषय पर धूल पड़ी है। प्रत्येक व्यक्ति आशीष देता है लेकिन आपके हित चिन्तक ये पाँचों हैं। वो क्या है- "होनहार बिरवान के होत चीकने पात।" आपको आशीष- "जावो तुम सफल हो" खाली कहने मात्र से नहीं होता है। आपने जो व्रत लिया है. आपने जो अनुष्ठान आरंभ किया है, जिस प्रकार से आपको आदेश दिया गया है,निरूपण कर दिया गया है उस तरह से अगर साधना करेंगे तो आप अवश्य सफल होंगे। आशीष से केवल बल है आपको, कि आप अपनी साधना में, अपने अनुष्ठान में, वार्षिक परीक्षाओं में और आदेश जो पालन होना हो,जैसा दिखा दिया जाता है,करा दिया जाता है,बता दिया जाता हैं करवा दिया जाता है उसको वैसे अगर आप करेंगे,अपनी नहीं चलायेंगे तो अवश्य अपेक्षा से भी अधिक आपको लाभ होगा और ये सब चीज मिलेंगी। ये जो आशीष है, बल है। इस बल से क्या होता है आपको बीच-बीच में जो स्नायविक दौर्बल्य होती है जिसको Nervous Temperrament कहते हैं ये दूर हो जाते हैं। जो आशीष मिला है, बराबर हम यशस्वी होंगे।

मनुष्य अपने आपको सदा दुर्बल पाता है। सदा अभाव ग्रस्त है। कि नहीं, कि नहीं, कि नहीं-ये चलता रहता है उसके अंत:करण में। अंत:करण कहते हैं चार बातों को। चार हैं-मन, बुद्धि, चित्त माने Nature (प्रकृति) कहते हैं जिसको, और मैं हूं, मैं हूं जो करता है, इसको कारण कहते हैं। ये Instrument हैं। ये अन्दर के Instrument हैं, बाहर नहीं दिखते। इसके द्वारा आपको अपना जीवन यापन करना है। विद्या और कला से निपुण होना है। अध्ययन और अभ्यास करके आपको परीक्षा देनी होगी। सब जगह परीक्षा। ये जगत जो है परीक्षा केन्द्र है। यहां आनन्द, सुख दुख देखने हम नहीं आये हैं। परीक्षा देने के लिये आये हैं। पढ़ेंगे, अभ्यास करेंगे तो उत्तीर्ण होंगे। ये जितने लोग आपके आस-पास में है ये सब सहायक हैं,संरक्षक हैं और परीक्षक भी हैं। जी हाँ। इसलिये, ये संसार कैसा है? एक उर्दू मिसरा है- "फरिश्ते मुब्तिलाये आजमाइश हो तो चीख उठें।" देव जो होते हैं अमर हैं। वहां कोई कायदा कानून नहीं। न मरना, न जीना कुछ भी, कोई सवाल नहीं करना उनसे। अमर हैं।

ऐसे इस्लाम में भी है। अमर हैं। कोई पूछता नहीं उनको। कुछ भी करें। कहीं भी जाये कोई कोई जवाबदारी ही नहीं, उत्तरदायित्व ही नहीं हैं। तो "फरिश्ते मुब्तिलाये" माने जो वरदान मिला है उनको। वे Creation है। वो भी सृष्टि है। अगर आज़माइश हो, कसौटी में उतारा जाय तो चीख उठेंगे-अरे बाप रे, ये कहां से आया। लेकिन ये इन्सां है। ये हम सब मनुष्य हैं। इन्सां माने आदमी, केवल, जिन्स के पीछे मरने वाले माने Materialistic। जिन्स माने Matter जड़ वस्तुएँ जो होती हैं। वस्तुओं के पीछे मरने वाले, वो जिन्स होते है और वो जिन्स होते हैं जो वस्तुओं के लिये किसी का खून कर डालेंगे। इन्सानियत में इन्स माने

गुण। विद्या और कला के द्वारा अपने आपको विभूषित करे उसको इन्सा कहते हैं। गुण से आप वर्धमान हों। गुण की वृत्ति हो। आप निर्वाण हों। गुणज्ञ हों और औरों को भी अपना गुण देने में समर्थ हों। ये इन्सां है जो गुण ग्रहण करता है। कला और गुण ग्रहण करता है इसके सिवाय उसको कुछ मालूम नहीं। दोष के साथ दुर्गुण नहीं देखता। दोष अगर हम देखेंगे तो हम दोषी स्वयं हो जायेंगे। अगर गुण की तरफ हम जायेंगे तो हम स्वयं सद्‌गुणी होंगे। ये सिद्धांत है। इसलिए बोले कि हमको गुणज्ञ होना है। ये जो शक्ति है गुण-ये साधारण बात नहीं है।

आप में आत्मा है। जीव, आत्मा और परमात्मा ये तीनों एक हैं। कोई भेद नहीं है। इसलिए ये जो शक्ति है उसको सत् कहा। वेदोक्त जो भाषा है उसमें सत् कहा है इसको। तत्-सत्। उसी को Energy कहा है। उसी को Cosmic Energy कहा है। उससे परे एक और है जिसको Divine Energy कहते हैं। ये Divin गुण हम रे में है। दिव्य गुण संपन्न हैं लेकिन हम भूल गये हैं। आज कल ये विद्या लोप हो चुकी है। आत्मा की विद्या है आत्मा का जो धन है, हम गये भी, अगर मिले भी तो हमारी तैयारी नहीं। इतने हम दुर्बल हैं कि हम कर नहीं पाते हैं। सब कुछ करना है। तो तात्पर्य ये है कि आप भी इन्सां है जो देते जा रहे हैं इम्तिहां अपने। इन्सां पल-पल, प्रत्येक सांस पर इम्तिहान में लगा है। प्रश्न को तो Solve करना ही होगा।

अगर बराबर Solve होगा तो अवश्य उत्तीर्ण होंगे। तो ये आशीष है। ये शक्ति है। जो आपकी बुद्धि, मन, चित्त और अहं, ये अन्तःकरण को बल पहुंचाता है और बल पहुंचा करके आपके साहस को बढ़ाती है। और साहस बढ़ने पर परिणाम को अवश्य पहुचेंगे।

अजामिल करके एक उदाहरण दिया गया है। वेश्यागामी था। यहां तक अन्धा था कि सारा घर उजाड़ दिया। कोई भी उसके साथ नहीं रहा। बाल बच्चे भीख मांगने के लिए निकल कर चले गये। जब कुछ न रहा तो वेश्या के द्वार पर जा पड़ा। खूब पीया और वहीं पड़ा रहा। वेश्या ने बहुत अपमान किया। बहुत दुख दिया। बहुत कुछ किया। जब सब कुछ समर्पण कर दिया तो मैं भी समर्पित हूं। मार चाहे काट चाहे कुछ भी कर। यहीं मरेंगे हम, जाते नहीं।

अब साधु लोग दो चार आये बस्ती में। गांव के लोग तो तिरस्कार करते है। उन्होंने साधुओं को देखा, बोले-अरे बाबा, एक भक्त है। उसका नाम अजामिल है। बस्ती के बाजू में दिखती है झोपड़ी, वहीं रहता है। वहां बड़ा सत्कार, सेवा होगी आपकी।

ठीक है-बोले बाबा। जैसा आप कहेंगे, जाते है। चारों साधु मिले और वहां पहुचे। नाम पुकारा-आया सामने। बोले-महाराज, हम तो साधु लोग है। संतजन हैं। आध्यात्मिक पुरुष हैं। हमें भोजन चाहिए और कुछ नहीं। भूखे हैं,शरीर के लिये भोजन चाहिए। जो कुछ आपके पास है, दीजिये। हम लोग बनाके खा लेंगे।

बोले-ठीक है। आप ठहरिये झाड़ के नीचे।

साधु लोग ठहर गये। ये गये वेश्या के पास बोले-देख बाई, मेरे पास जितनी सम्पत्ति थी,सब दे दिया। यहां तक कि मैंने अपने आपको सौंप दिया। मैंने आज तक न उत्तर दिया, न कभी कुछ मांगा। अब, मैं अपने लिये नहीं आया हूं अभी। चार साधु द्वार पर आये हैं। तू वेश्या है। यहां तो कोई नही आयेगा। तेरे अन्न कोई

ग्रहण नहीं करेगा। धर्म के अनुसार, सामाजिक स्थिति जो होती है, आपका अन्न पानी भी लेने के लिए तैयार नहीं होंगे। उन्हें लोगों ने भेजा है। ऐसा करिये, आज इतना आप काम कीजिये। उसके बाद हम कुछ भी नहीं मागेंगे।

क्या ?

उनको भोजन करा दीजिये।

ठीक है।

वैश्या सहमत हो गई। उसको सामान दे दिया। साधु लोग पकाये और खाये। धीरे-धीरे अजामिल जाकर वहां बैठे। उन्होंने पूछा–कि आप ब्राम्हण होकर भी ऐसे क्यों हो गये ?

कुछ नहीं। बोले–महाराज, ये सब तो ठीक है। सब आनन्द हैं। आपका भोजन हो गया कैसे भी हैं। किस प्रकार से भी हैं। मैं अपना भोगने के लिये तैयार हूं।

बोले-अच्छी बात है। आप अपना भोगने के लिये तैयार हैं। ये अति उत्तम बात है। ये बिलकुल उत्तम चीज है।

जी, मैं प्रसन्न हूं। मैं अपना सुख-दुख भोगने के लिये तैयार हूं। हमें और किसी सहारे की आवश्यकता नहीं है। अब आपका काम हो गया। भोजन कर लिया आप तृप्त हो गये। आराम करिए। फिर अपना पथ पकड़े।

नहीं, बोले-ऐसी बात नहीं, मैं बहुत प्रसन्न हुं आपको देख करके। आप कर्त्तव्य परायण हैं। एकनिष्ठ हैं। सब धन दे दिया। आपने आपको भी बेच दिया और आज भी जो आपनें सेवा की है। अपने लिए नहीं मांगा, बल्कि दूसरे व्यक्ति की सहायता के लिए मांग के लाये हैं। फिर भी आपका सम्मान नहीं। तुमसे हम प्रसन्न है। जाओ,हमारा आशीष है। बाद नहीं। आशीष है। आशीर्वाद माने भविष्यत। आशीष है-तुम्हें एक संतान प्राप्त होगी। उसका नाम नारायण रखना। जिस समय तुम्हारा अन्त आयेगा, उस समय नारायण पुकारोगे, लड़का तुम्हारे पास आ जायेगा। ये बहाना है। इससे तुम्हारी मुक्ति हो जायेगी।

साधुओं ने क्या कहा-आशीष दिया कि तुम्हारी मुक्ति हो जायेगी। बच्चा पैदा हुआ। बड़ा हुआ। प्यार मिलने लग गया। उसके बाद समय आ गया उसके जाने का। लड़के से बढ़कर कोई मोह नहीं होता संसार में संतान सब को चाहिए, कोई भी गृहस्थ आश्रमी हो। भई, पुत्र होना चाहिए। पुकारा उसको। मरते समय मनुष्य अपने निकटतम संबंधी को बुलाता है। ये नियम है। निश्चित है ये। और किसको बुलाये, लड़के को बुलाया। नारायण बोला-वो आ गया। जो कुछ अपना करना था, कर करा दिया। बोल दिया हम तो जा रहे हैं अब तुम अपना सम्भालो घर द्वार। और वो मुक्त हो गया। यमदूत के बजाय देवदूत आते हैं। और उसको ले जाते है माने वो स्वर्ग में जाता है।

तो तात्पर्य ये है कि अब,ये क्या नारायण बोलने से मुक्ति हुई? आज सारा संसार नारायण, राम, हरे कृष्ण, शिव – शंकर, भोले शंकर कौन–कौन से नाम नहीं लेता, बताओ न हमको। हर एक साम्प्रदाय के लोग, हर एक ईश्वर का नाम ले करके जी रहे हैं। ये सत्य कह रहा हूँ सुन लो। तो साधुओं ने उनको जो आशीष दिया वो निमित्त है उस नाम का। तुम मुक्त हो जाओगे। साधुओं की सेवा जो किया है। आशीष है जिससे वो मुक्त हुआ, क्योंकि उस नाम को उसने धारण किया। नारायण नाम तुम धारण करो, मेरा आशीष है कि तुम मुक्त हो जाओगे।

इसलिये आज मेरी आशीष है कि तुम्हारा जीवन सफल हो, तुम्हारा चरित्र उज्जवल हो। तुम अध्ययन करो, अभ्यास करो और सदा सर्वदा परीक्षा में, इसी तरह अगर अध्ययन, अभ्यास किये तो कभी भी परीक्षा में पास हो सकते हैं चाहे कोई भी, कहीं से भी परीक्षा ले। इसलिए उर्दू में मिसरा बहुत अच्छा है– "फरिश्ते मुक़ित-लाये आज़माइश हो तो चीख उठे, ये इन्सां है जो देता जा रहा है इम्तिहां अपने।' ये संसार परीक्षा केन्द्र है। यहां प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक समाज, प्रत्येक विचार में उन प्रश्नों का ही उत्तर देता है। इसके लिए सदा उद्यत रहना चाहिए, कभी मुंह नहीं फेरना चाहिए। क्यों ? स्पष्ट कर दूं-कर्त्ता व्यक्ति जो होता है घर में सदा वो ऋणी है। पत्नी कहती है ये करना है तुम्हें। पुत्र कहता है-ये करना है तुम्हें। पुत्री कहती है-ये करना है तुम्हें, मित्र कहते हैं-ये करना है तुम्हें। ये ये करना है माने सब कोई उसको, कार्य करने के लिए बाध्य करते हैं। अब वो व्यक्ति ऋणी है कि नहीं ? उऋण होते हुए भी ऋणी है। सब व्यक्ति, जितने लोग हैं परिवार के, हित मित्र आदि जो भी हैं, देश धर्म जितने है सब उससे काम लेते हैं। कोई Spare नहीं करता उसको। अब ये परीक्षा है कि नहीं ? अगर उसने दिया गया कार्य किया, तो बहुत अच्छा है। नहीं तो, क्या है ? अयोग्य है। तुम घर में संचालन करने में असमर्थ हो, इसलिये दूसरों को दे दो भई, यह कार्य वो करें। माने परीक्षा है। सब जगह परीक्षा है। परीक्षा के बिना कुछ भी नहीं।

अगर ये आपको समझ में आई बात, तो मेरी आशीष है-तुम्हें साहस प्राप्त हो और सूझ-बूझ मिले। लेकिन इस आशीष को रखना पड़ेगा तदनुसार आपको विद्या अध्ययन और अभ्यास में परीक्षा देनी होगी। तब वो आशीष आपको उच्चतम स्थान पर ले जाके पहुंचा देगी। क्योंकि कहा गया है- उच्चतम स्थान, उच्चतम व्यक्ति के लिए सदा रिक्त रहता है। पलां के बाद कौन ? ये प्रकृति अपने आप वहां बिठा देती है।

आशीष का दूसरा अर्थ है– शक्तिपात। आपका उत्साह बढ़े। उत्साह जिससे आपका अपना अध्ययन और अभ्यास करके उत्तीर्ण हों। आपको बल प्राप्त हो। तो यहां आपको शक्ति दी जाती है। उसी के बीच में (Transfusion) लगा है। बस, इतना ही कहना पर्याप्त है। अगर आपको समझ में बात आई हो तो मेरी आशीष सदा सर्वदा आपके साथ है।

ओम् शांति : शांति : शांति : ।

※※

प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र है। प्रत्येक व्यक्ति का अपना धर्म है। "धारणात् धर्मं इत्युच्यते"-धारणा जो हमारी है अर्थात् हम जो कार्य करना चाहते हैं उस विचार का एक संकल्प बनाते हैं, प्लान बनाते है और सक्रिय होते हैं। अब काम हो गया, मकान बन गया, पैसा मिल गया, लेकिन भय हमारा दूर नहीं होता। और जो बंधन है, जहां-तहां जिसको आधीनता कहा गया ये भी दूर नहीं होता। इसलिये "धारणात् धर्मं इत्युच्यते" मैं अपने अनुभव से आपके सामने रख रहा हूं।

※※

शांति-क्यों नहीं मिलती ?

ॐ स्वस्तिनो इन्द्रो वृद्धश्रवा स्वस्तिन: पूषा विश्ववेदा ।
स्वस्तिन: तार्क्ष्यो अरिष्टनेमि स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु ॥
ॐ द्यौ शांति: पृथिवी शांति: आप: शांति: ओषधय: शांति:
वनस्पतय: शांति: विश्वदेवा शांति: ब्रह्म शांति: सर्वंग्वं शांति:
शांतिरेव शांति: सा मा शांति: रेऽऽधि सुशांतिर्भवतु
ॐ शांति: शांति: शांति: ।

प्रत्येक व्यक्ति को शांति की जरूरत है। शांति, शांति, शांति- सब कोई शांति प्राप्ति के पीछे पड़े हैं। शांति बाहर नहीं है। शांति अपने में है। शम् धातु से ये शब्द की व्युत्पत्ति हुई है। शांति एक शक्ति है। वो शक्ति अथाह है। असीम है। जिसकी कोई सीमा नहीं है। शांति एक स्थिति है अवस्था है। स्थिति, अवस्था-प्रकृति दो प्रकार की है। एक अवस्था है और स्थिति- अपने आप में स्थित होना है। जैसे अधिकारी व्यक्ति जब अपने अधिकार में आता है तो अधिकार मात्र-उसके जीवन में, उसके कार्य में, उसकी कृति में, उसके शब्दों में पाया जाता है और कुछ भी नहीं। ये स्थिति है। दो प्रकार की स्थिति है। अब बाहर जो स्थिति है, वो परिस्थिति है। परि माने चँहु ओर। चारों तरफ आपत्तियां, विपत्तियां और संकट, इसके बिना तो जीवन किसी का भी नहीं है। यही कारण है कि हम सदा चिंतित रहते हैं और चिंता में ही सोचते हैं कि भई, हमें शांति किस तरह से प्राप्त हो। लेकिन ये जो जग है, अशांत है। यहां बाह्य जगत में शांति नहीं है।

मनुष्य और कुटुम्ब में समाज है। एक धार्मिक समाज है। एक राजनैतिक समाज है। ऐसे पांच समाज हैं या पांच नीति हैं या पांच अवस्थायें है, जिसमें से हमें निकलना है। अब ये तो संघर्ष है। ये जीवन ही तो संघर्षमय है। तो घर्षण है। जैसे बहिर्जगत में हम घर्षण करते हैं। प्रत्येक जगह जाकर संघर्ष के बिना तो एक सेकण्ड भी नहीं हम निकाल पाते हैं। अब हम चलते है शांति की ओर। शांति माने शम्-सब शांति हो जाय। सारा वातावरण शांत हो जाय। चारों ओर, चारों दिशाओं से हमें शांति के सिवाय कुछ भी न मिले। शांति, इसका पर्याय शब्द हम उसको कहते है, शांति के बाद जो परिणाम होता है, वो है आनन्द। हमारा मन, बुद्धि, चित्त, इन्द्रियों के द्वारा बहिर्जग की यावद वस्तुएं जो हैं, उस ओर खिचती चली जाती हैं और किसी भी स्थिति में वो बच नहीं पाता। हम हों या और जो भी हो हमारे परिवार में, उससे बच नहीं पाते। क्योंकि बाह्य आकर्षण इतना प्रबल है कि उस ओर हम बने रहते हैं। और वो बाह्य आकर्षण के प्रलोभन में, हम अपने आपको भूल जाते हैं। अपने आपको जब हम भूल जाते है तो भूलने के कारण ही हम उसके हो जाते हैं। जगत में दो तरह से व्यवहार और व्यापार होते हैं। या तो हम करके रखें या होकर रहें। आप में शक्ति है तो करके रखो, नहीं

तो दूसरी शक्ति मानो है उसके होकर रहो। इस संसार का यही सार है। लेकिन हम भूल जाते हैं। बहिर्जग में शांति नहीं है। कारण, ये जग जो है, जो हमें दिखाई देता है, जो वस्तु दिखाई दे रही है, ये परिवर्तनशील हैं। सब Changing है। हम जैसा देखते हैं वैसा है नहीं। जब हम पास जाकर देखते हैं, तब हमारा चित्त, हमारा मन, हमारी बुद्धि भी बदलती चली जाती है। क्यों? ऐसा Changing होने से, हमारे भी changes आते रहते हैं। तो जग की ओर हम हैं और हमारे जो कुछ व्यवहार, व्यापार चलते है, जग से हैं। इसलिए हमारी अनुभूतियां भी जो होती हैं, जग के आधार से होती हैं। जैसी वस्तुओं की या प्राणियों की या जो संबध है, व्यवसाय हो, सुख-दुख हो या कुटुम्ब परिवार हो या देश धर्म आदि जो है, बहिर्मुख जो हैं, वो अशांत हैं। अशांति के सिवाय कुछ भी हमको प्राप्त नहीं होता। यही कारण है मनुष्य के सुख-दुख का। व्यक्ति स्वयमेव अपने सुख-दुख का कारण है। इसलिए अगर ये समझ में आ जाय कि बाहर तो सब अशांति ही अशांति है, शांति कहां है? तो एक सूत्र दे दिया है हमारे मनीषियों ने. श्री रामचन्द्र जी ने-शम्, दम, उपरति, तितीक्षा, श्रद्धा और समाधान।

हमारे जीवन-यापन करने के लिए कोई भी सामाजिक व्यक्ति, एक व्यक्ति की तुलना में देखें तो दो रोटी, दो लंगोटी, छोटी सी जगह, दवा और कुछ उसके व्यापार को, उतना ही चाहिए। लेकिन प्रलोभनों में आ करके हमारा इतना व्यय हो जाता है कि जिसको कहते है standard of living। यहां हम हार खा जाते है। क्योंकि हमारी जो आय है, उतनी नहीं है। आय न होते हुए अगर हम बराबरी करने जायेंगे तो दुख के सिवाय कुछ नहीं मिलेगा। अच्छा, ऐसा नहीं कि लोग नाम नहीं रखते हैं, खाली नाम रखते है, कोई आपको देता नहीं। कोई बराबरी तो करता नहीं, कि भई, अन्दर हो. बाहर आ जाओ। ऐसा कोई नहीं कहता है। इसलिये weaklings have no place in the world, कमजोर के लिए, दुर्बल के लिए इस जगत में कोई भी स्थान नहीं, जग में कहीं भी स्थान नहीं है। अब रहने के लिए हमें क्या-क्या होना? प्रयत्न तो करना ही होगा, जब तक हम संसार में रहेंगे। स्वय में जब शांति नहीं, तो शांति कहां है। ये मैंने आधार रखा।

हम परवश हैं। मेरा जीवन परवश है। इसलिये परवशता जो है और मनुष्य, ऐसी श्रृंखला है जिससे वो छुटकारा पा ही नहीं सकता। रामायण में दोहा कहा है कि "कहत कठिन समुझत कठिन साधत कठिन विवेक, होइ घुनाक्षर न्याय जो पुनि प्रत्यूह अनेक।" अब स्थिति जो है, जिससे आप शांत हो सकते हैं। शान्त्यावस्था जो है। रूपस्थिति जो है। वो कहना जरा कठिन है। बोल नहीं सकता कोई। समुझत कठिन-एक तो समझ कर भाषा में लाना, वो भी कठिन। और जिनको अनुभव ही नहीं, उनको और समझाना कठिन। विवेक माने हंस नीर क्षीर न्याय। ये जल है। ये दूध है। और मिलाकर रख दिए, वो आधा झूठ हो जाता है। ये विवेक एक बुद्धि ये प्रज्ञा ये प्रज्ञावान है। ये प्रज्ञास्थिति है। प्रज्ञा-स्थिति माने ये तूर्यावस्था है। ये तो बहुत दूर तक चला गया। यहां वो विज्ञान और विज्ञान को विश्लेषण करके आपके सामने रखने में समर्थ हो जाता है। यहां तक उसको सूझ-बूझ मिलती है। Intution हो जाता है। तो तात्पर्य यह है कि ये स्थिति, ये भूमिका में आने के बाद इसको शान्त्यावस्था कहते हैं। ये त्रिगुणमय जो सारा

संसार है वो त्रिगुण से परे जब तक आप नहीं होते हैं, तब तक ये अवस्था प्राप्त होती नहीं। ये ही तूर्यावस्था, जिसको षष्टम भूमिका कहते हैं, ये योगान्तर्गत भाषा है। ऐसा वो निरूपण कर दिया गया गया है। तो शम्, क्या शम् होना चाहिए? ये त्रिगुणमय जो संसार है, ये धीरे धीरे अपने वश में लाना चाहिए। और जो सत्य है, अपना सारा व्यापार सत्य है के द्वारा वो करें।

कर्त्तव्य में आना चाहिए मनुष्य अपनें आप। वो शब्द है कर्त्तव्य। तव्य माने योग्य। तव्य जो है, प्रत्यय है माने प्रतीति और कुरू धातु से बना है। तो योग्य जो करने का है, वो हमें करना है। जो योग्य हमारे लिए है, वो ही करें-यही सत्य है। फिर चाहे पति हो, पत्नी हो, माता हो, पिता हो, भाई हो या बंधु हो, कुछ भी हो, व्यापार हो या अधिकारी व्यक्ति-जिस अधिकार से वो संपन्न है, जो योग्य है करने का, वे वही करें, हम उसको सत्य मानते हैं। 'ऋतम्भरा तस्य प्रज्ञा"- अगर यह सत्य सामने रखा, तो अवश्य प्रज्ञावान हो जावेगा। अंतत: जीवन यापन करते करते करते एक दिन ऐसा आयेगा, वो महान हो जायेगा। न राख लगाना पड़ता है, न चोटी मुड़ाना पड़ता है, न भगवा पहनना पड़ता है और न थोबड़ा बनाना पड़ता है, कुछ भी नहीं करना, न शरीर को तंग करना पड़ता है, न उसको दुख देना पड़ता है। केवल इतना ही वो कर्म करे, इस प्रमेय को अपने पास रख के कि मेरा जो कर्त्तव्य है, मैं अपना करता रहूँ। जानता हूँ और भैय्या, हम कुछ भी नहीं जानते। हम अपने को नहीं जानते और किसी को क्या जान सकेंगे। भूल से हम कह रहे है कि हम तुमको जानते है, ये नहीं। ये Revange है, प्रतिकार है। ये दोष है। इसलिए हम इस कर्त्तव्य को सर्वश्रेष्ठ कहते हैं। अगर हमें इस संसार में रहना है और जीवन यापन करना है तो थोड़ा कटु होना पड़ता है। कटु ये है कर्त्तव्य,जिसका केवल पालन करना है। तव्य माने योग्य। तव्य और अनीय- ये दो समानार्थी शब्द, एक एक का पर्याय, तीसरा शब्द नहीं है। तव्य, अनीय और कर्त्तव्य का एक ही अर्थ है।

संसार में रहना है, ये Legal है। जिससे हमारा उद्धार हो और औरों का भी उद्धार हो, वो करें। सत्यम् वद धर्मम् चर-सत्य कहना, सत्य बोलना, सत्य करना और उसी तरह से चलना। वो ही अध्ययन और अभ्यास करें। वो ही अध्ययन और अभ्यास समाज में भी करायें। समाज को अध्ययन और अभ्यास कराकर,स्वयं भी अंतिम सांस पर्यन्त अभ्यास मे रहें,आचरण में रहें। अगर हम आचरण नहीं करते हैं तो दूसरों को कहने के लिए अधिकार ही नही है। हम स्वयं गुड़ खाते हैं। बच्चा जिसको कृमि हो गया है। जन्तु हो गया है। मां कहती हैं बाबाजी को- कुछ दवाई बताओ। बाबाजी तो खुद गुड़ खा रहे हैं। तो बच्चे को कैसा कहें-भई, गुड़ खाना नहीं, जन्तु होते हैं। तो चतुर व्यक्ति कह रहा है- अच्छा भई, कल परसों आना। तो आने वाले व्यक्ति के आने तक, वो गुड़ नहीं खाता, उस काल में। बिना गुड के रहता है। देखो, मैं गुड़ खा रहा हूँ? बच्चा बोला- नहीं। तो गुड़ खाना ठीक नहीं-वह बोला। बच्चा - हाँ भई, अब गुड़ नहीं खाएगें। यही बुद्धि है। यही बुद्धिमता है। बुद्धि एक ऐसी चीज है, ऐसी शक्ति है कि समय देख करके, हित हो, कल्याण हो-झूठ से उस समय का परिवर्तन कर, उस समय को टाल करके अपने को बदल करके और अपनी भाषा को सत्यांश से

प्रारंभ करे, इसको प्रज्ञावान कहते हैं। 'ऋतम्भरा तस्य प्रज्ञा – उसकी बुद्धि सत्य के सिवाय और कुछ भी नहीं। उसकी बुद्धि में सत्य के सिवाय कुछ नहीं रह जाता, तब उसका नाम प्रज्ञा है। प्रज्ञावान है।

तो तात्पर्य ये है कि बाहर शांति, इस तरह से नियम बना लिए गए हैं। जो नियम के विपरीत चलता है, वो दण्ड का पात्र होता है। हम हों या और कोई भी हो। स्वच्छन्द नहीं। दुनिया से आप बच सकते हैं लेकिन अपने भीतर से बच सकते हैं क्या? नहीं। दुनियां को धोखा दे सकते हैं, लेकिन स्वयं को धोखा नहीं दे सकते। ये जो कर्त्तव्य हैं इस तरह से हमने शांति शब्द के आधार से रखे। तो शम् माने ये प्रमेय को लेकर चलना, बाकी सब शांत हो जाता है। हम उसको कहते हैं। बरावरी का हो तो अपना करना है कुछ भेंट करके। साम-ये दे करके, अपनी वरावरी में आसन देकर बिठाना, मित्रता प्राप्त करो। उसके बाद दाम, कुछ देकर अपना बना लें। नहीं मानता तो दण्ड देना है। तो दण्ड दे करके, अगर बहुत ही बल हैं तो एक-एक को फोड़ करके। साम, दाम और दण्ड विभेदा ये सब दम में आता है। तब अधिकारी व्यक्ति होता है।

हमारे पास जो लोग आते हैं। आप समझते हैं कि हम कुछ देते नहीं। उनको भी देते हैं। कभी कभी देते हैं तो कभी कभी उनसे हम लेते हैं। कभी हम दण्ड भी देते है उनको। साम, दाम अरु दण्ड। ऐसा करने से ऐसा होना है। ऐसा ऐसा ये नहीं चलेगा। ऐसा करना होगा आपको। अभी तो हमको दिखाई नहीं देता क्योंकि ये धर्म है। ये और भी है धार्मिक। इससे वो दिखाई नहीं पड़ता और विभेद-संसार में अपना कोई नहीं है। ये ऋण है। यहां आपको चुकाना पड़ेगा। साहस जुटाइये। आप देखते हैं कि एक गया, एक आया एक गया, एक आया-ये संसार ऐसे ही चलता है। तो ये हमारा साम, दाम, अरु दण्ड विभेदा – राजनीति में ये अर्थ होता है और धर्मनीति में ये। शब्द एक ही है। आचरण में केवल अधिकार भेद – जो व्यक्ति जिस अधिकार से सम्पन्न हैं वो अपना कर्त्तव्य पालन करे। इसको हम सत्य कहते हैं। तो शम् दम उपरति – धीरे से आपकी उन्नति होती है। धीरे से अपने आपमें आ जाता है। जहां कर्त्तव्य पालन हुआ, अपने आपमें आता है। उसकी मस्ती चढ़ती है और बाहर का जो प्रलोभन है वह अपने आप बंद हो जाता है। उसका भय भी दूर हो जाता है। लगाव और खिचाव जो है वह भी कम हो जाता है।

तितीक्षा माने सहनशक्ति। सहनशक्ति बढ़ती है और बढ़ते बढ़ते ऐसा होता है कि कैसी भी परिस्थिति आ जाय, कैसा भी प्रसंग आ जाय वो डावांडोल नहीं होता। अडिग हो जाता है और अडिग होने से बल रहता है। वो निकल जाता है। प्रसंग अपने आप कट जाता है। वो ज्यों का त्यों बच जाता है। लोग कहते हैं कि गया, गया, गया। गया नही, वो वहीं के वहीं है। ज्यों का त्यों, ताजा तराना। तो कोई भी प्रसंग हो, उसको सहन करने की शक्ति होना चाहिये। उबलना नहीं चाहिये। क्रोध भी नहीं करना चाहिये। बदला भी नहीं लेना चाहिये। दण्ड देना चाहिये। दण्ड देना, ये बदला नहीं है। बदला एक अलग चीज हैं और दण्ड ये अलग है। हर एक व्यक्ति सभ्य है। व्यक्ति तब तक सभ्य है जब तक उसका गुनाह या अपराध साबित नहीं होता। प्रत्येक व्यक्ति सभ्य है, सब अच्छे हैं लेकिन जब अपराध सिद्ध हो जाता है तो वह

दण्ड का पात्र होता है फिर उसको दण्ड देना उचित है।

तो साम, दाम, उपरति और क्या बताया - तितीक्षा। तो कहां तक सहन करना चाहिये। एक सीमा है सहन करने की। सहनशक्ति को बढ़ाना चाहिये। अगर हम सहन शक्ति नहीं बढ़ायेंगे तो हम कोई कार्य नहीं कर सकेंगे। हम ही जब उबल जायेंगे तो काम स्थगित हो जायेंगे। तो सहनशक्ति, जिसका नाम हैं धैर्य। धैर्य के साथ जीवनयापन करना चाहिये। एक धैर्यवान व्यक्ति के साथ सारा कुटुम्ब धैर्यवान हो जाता हैं। इस प्रकार धीरज से उसका नाव पार हो जाता हैं। तो तितीक्षा माने सहन करने की ताकत होना चाहिये। सबको यही सिखाना चाहिये, अपने घर में भी।

जैसा जो कुछ भी है उसमें अपना निर्वाह करना चाहिये और सत्य को नहीं छोड़ना चाहिये। पिता, पिता है। भ्राता, भ्राता है। पुत्र, पुत्र हैं। भगिनी, भगिनी हैं। माता, माता हैं। पत्नी, पत्नी है। ये ऐसा एक व्यक्ति होते हुए भी व्यवहार सबसे अलग अलग है। ये सबका साथी हैं। व्यवहार में हमें भेद दिखाई देते है, वस्तुतः वो व्यक्ति सबके लिये एक है। ये वेदांत हैं और ये सत्य हैं कि व्यवहार जो है, संसार में हम पाते हैं तो वो आपको मालूम होना चाहिए और वेदांत ये है कि इस संसार में, इस कुटुम्ब में, मैं ही अकेला हूं बाकी और कोई नहीं। मैं ही पिता हूं। मैं ही भाई हूं। मैं ही पुत्र हूं और मैं ही पति हूं। लेकिन एक ही व्यक्ति है। सबके साथ आपका व्यवहार अलग अलग है। सबकी डिमाण्ड अलग अलग है। तो डिमाण्ड के अनुसार जैसा जैसा समय आये वो पूर्ति करना चाहिये। बच्चा पढ़ता है, फीस चाहिय। लड़की बड़ी हो गई है, शादी करना चाहिये। जो योग्य है, पहले करना चाहिये ये इसको हम कर्त्तव्य कहते हैं। ये सहनशक्ति होना चाहियें, तब वो पूरी होती है।

श्रद्धा - इसके बिना काम नहीं होता। एक ध्येय होना चाहिये। ध्येय ही जीवन है। इसके बिना कोई जीवन नहीं है। वो ऐसा ध्येय होना कि अभी भी, आगे भी, कभी भी हमारा कल्याण हो और हमको देख करके औरों का भी कल्याण हो। इस प्रकार से हमारा Aim होना चाहिये कि जिससे सबका कल्याण हो। हम कुटुम्ब में और समाज में आदर्श रहें। हमको देख करके लोग उसको पढ़ें कुछ सीखें और समझें और करें। Charity begins at home आपको क्या करना है वो घर से ह शुरूआत है। तो कर्त्ता पुरुष को बहुत सहनशक्ति चाहिये। हां हां, ठीक हैं, समय आने पर सब बराबर हो जाएगा और बराबर होता चला जाता है। इस प्रकार से सहनशक्ति होना हमें। फिर श्रद्धा, सत् माने सत् वस्तु Almighty जिसका ये जग है। हम कुछ भी नहीं, उसके शक्ति से, उसके बुद्धि से उसके ज्ञान से, जो कुछ भी हमको मिलता हैं, हम करते हैं। आप लोग भी उसी तरह से हैं। तो ये जितना मिले, जैसा मिला - कभी घी होना, कभी मोठी चना, कभी वो भी मना। बहुत प्रसन्न हो रहा है, नहीं और नहीं मिला तो बहुत दुख हो रहा हैं, नहीं। सबमें अपना अपनें पास है। आज हमको घी मिलना हैं, मस्त माल मिलना है, कल हमको चना मिलता हैं और एक दिन ऐसा भी आता है जब पानी भी नहीं मिलता। तो हर परिस्थिति में एक मस्ती होना चाहिये। वो हैं कर्त्तव्य पालन करना फिर चाहे परिस्थिति कैसी भी आ जाय। परिस्थितियां आपको उबार देती हैं।

अब समाधान-सम्यक् आधान। सम्यक् माने पूरी तरह, आधान माने जो आप कर रहे हैं। ये बिलकुल बराबर हैं। आप Justified हैं। आपको इनाम मिला, अकराम मिला और आप उपाधियों से विभूषित हैं। राष्ट्रपति अवार्ड मिलता हैं। ये व्यवहार इस प्रकार से होता हैं। और समाधान मानें जो ध्येय लेकर आप चले। कोई Creator है। Creation में जो Creator हैं उस ओर जब आप जाते हैं अपनें आपको समर्पण कर देते हैं। ये भगवान हैं। ये अवतार हैं। ये राम हैं। ये कृष्ण हैं। आखिर घर में रात को सोते समय किसी की शरण में जाते हैं और उसको याद करते करते सो जाते हैं। एक दिन ऐसा आता है आप आनन्दपूर्वक इस जगत से विदा हो जाते है। लोग कहते हैं वो बहुत अच्छा था। और एक जाता है तो बहुत गाली देते हैं। बहुत अच्छा था एक व्यक्ति, सौ आदमी उसके पीछे जीता है। तो तात्पर्य ये है सम्यक् आधान माने एक ध्येय और ये हमारा बल, ये शपथ है। इसी को शपथ कहते है। यही प्रतिज्ञा है।

मैं कौन हूं, क्या हूं, कब तक हूं, कैसे हूं, कितना करना हैं, कितना नहीं करना अपने अधिकार के बाहर न जाय और करें। ये ज्ञान अगर बना रहे तो आनन्द है इसमें। अन्ततोगत्वा ये षट शब्द रूपी सम्पति हमारे आचार्यों ने गाइड बनकर, गार्जियन बनकर हमको दिए है। इस प्रकार से आप राजनीति में रह सकते हैं, धर्मनीति में भी रह सकते हैं। समाज में भी रह सकते हैं और कुटुम्ब में भी रह सकते हैं। व्यक्ति अपने आप में भी सम्यक् आनन्दपूर्वक रह सकता है और आनंद से, प्रेम से, स्नेह से अपना जीवन यापन कर सकता है। इस तरह से जो कृतार्थ होता है, वह आनंदपूर्वक हो जाता है। कैसा जाता है-"जब तुम जन्मे जगत में, जगत हंसा तुम रोये। ऐसी करनी कर चलो तुम हंसमुख और जग रोये॥" ऐसा रहना चाहिए। कठिन त अवश्य है लेकिन कोई तो भी ध्येय चाहिए। सद्गुरू चाहिए, उसको सत्पुरुष चाहिए। एक व्यक्ति, जो आपका खास है, अधिकारी है, वैसा चाहिए। Proper Guide चाहिए। Proper Guidence में अगर रहकर और मानकर चला, तो कभी अमंगल नहीं रहेगा आपका। आपने एक बड़ा क्षेत्र ले लिया कार्य करने के लिए, अब अपना कर्त्तव्य पालन करना चाहिए।

आप क्षमा भी कर सकते हैं और दण्ड भी दे सकते हैं। क्योंकि अधिकारी उसी को कहते हैं जो शापादपि, शरादपि-जो क्षमा भी कर सकता हैं और दण्ड भी दे सकता हैं। अधिकारी वो है जहां आप क्षमा करें, क्षमा कर देना और जहां दण्ड देना हो, वहां दण्ड देना। आप अधिकार संपन्न हैं। आपके अधिकार में आंच नहीं आना चाहिए क्योंकि आप अकेले नहीं हैं और भी हैं आपको देखने वाले। ऐसा प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन का अगर ये सिद्धांत रखे, तो सच कहता हूं बहुत कुछ उसका जीवन सार्थक हो जाएगा, और बड़ा आनंद रहेगा। और कोई भले न माने इस बात को, लेकिन सिर झुकाना नहीं पड़ेगा आपको। इस ससार में व्यक्ति सबको प्रसन्न नहीं कर सकता और सब दिन सर्वदा प्रसन्न नहीं कर सकता लेकिन अपने को वो प्रसन्न रख सकता हैं। बाकी तो मतैक्य-मत विभेद, "मत मिले तो मेला है, नहीं तो सबसे भला अकेला है।" बस, इतना ही कहना पर्याप्त है। मैं क्षमा चाहता हूं।

ओम् शांति: शांति: शांति:।

माया और विज्ञान

माया – माया का अर्थ है, मेरा और तेरा। "मैं अरु मोर तोर तैं माया"। माया का अर्थ है – मैं और मेरा, मेरा और तेरा...खतम। आप मेरा और तेरा कहते हैं और मैं, मेरा–तेरा कहता हूं। शब्द एक ही है, आप देख लीजिये। मेरा तेरा का अर्थ-यह सभी में व्याप्त दिखलाई पड़ता है। मेरा और तेरा की प्रवृत्ति स्थायी या स्थिर नहीं होने देती। इससे दूर होने के लिये "अयं निजः परो वेत्ति" के भाव में आत्मसात होने के लिए आत्मबल की आवश्यकता है। आत्म बल अभ्यास से प्राप्त होता है। इस माया में रह कर भी न रहने के लिये स्थिरता या स्थायित्व की आवश्यकता है। यह स्थिति आत्मशुद्धि से प्राप्त होगी। आपको स्थायित्व प्राप्त करना है, स्थिरता प्राप्त करना है, शुद्ध होना है।

यह जो "लाइटनिंग" (प्रकाश) की बात करते हैं, यह इसी आत्मा का प्रकाश है। यह केवल इतना होता है कि मार्ग दिखता रहे और उस मार्ग से होते हुए निकलते चले जांय। ठीक उसी तरह जैसे जलाशय के पानी में काई के पड़े रहने से जल पारदर्शी नहीं रह पाता। लाइट आया, पत्थर रूपी काई के खुल जाने से, हट जाने से उस आत्मा के प्रकाश में हम आगे बढ़ते चले जाते हैं। आत्मा का यह प्रकाश, चरित्र रूपी जल पर, विषय वासना रूपी काई को हटाने का कार्य करता है। एक बार इस काई के हट जाने से प्रयास यह होना चाहिये कि हम पुनः उस काई को अपने ऊपर अच्छादित न होने दें। चरित्र से काई हट गई, फिर न आये –यह होना चाहिये। यह स्थिति हम सभी को ध्यान में रखना चाहिये। यह स्थिति निरन्तर (अंतर रहित) अभ्यास से, वह भी जन्म जन्म-जन्मांतर तक चलने वाले अभ्यास से प्राप्त होती है। इसे Continuously (यानें बंद नहीं होना चाहिये) बनाए रखने से चरित्र दोषों से मुक्त रहता है। इस आत्म शुद्धि के बाद विकार रूपी जितने कार्य होते हैं वे सब समाप्त हो जाते हैं एवं अक्षुण्ण रूप से शुद्ध कार्य होने लगते हैं। ऐसा होने पर हम अभय प्राप्त कर पाते हैं याने किसी भी प्रकार का भय जो मनुष्य को उसके शाश्वत मार्ग से अलग करता है वह भय ही दूर हो जाता है। यह स्थिति प्राप्त करनी है। यह तभी होगा जब हमें आत्म-दर्शन हो जाये।

इस शरीर में पांच कोश हैं। उसमें से एक है विज्ञानमय-कोश। साधना करते हुए हम वहाँ पहुचे, इसे Center of peace कहा जाता है। यह क्या है ? यह साधना की एक अवस्था है। इसे सहजावस्था भी कहते हैं। वहां आकर स्थित हो जायें या उस स्थिति को प्राप्त कर लें, वही सयत-आत्मा है। साधना की इस अवस्था में जब आप पहुंचते हैं, तब सब शक्तियां मिलती हैं। तब आप में बल आता हैं। सूझ-बूझ मिलती हैं और सब बातें होती रहती हैं।

"आनन्दमय कोश की अवस्था में शोक, चिंता, दुःख साधक को कुछ भी नहीं व्यापता। सब कार्य अपने आप होते रहते हैं और जीवात्मा

उसे साक्षीभाव से भोगते हुए आगे निकलता चला जाता है। यह भारतीय संस्कृति और उसका विज्ञान है इस तथ्य को आत्मसात करके अभ्यास द्वारा आगे बढ़ना चाहिए।

"तस्यापि निरोधेसर्वनिरोधात्" अर्थात् 'सेन्टर आफ पीस' के ऊपर, साधना द्वारा जब आप चले जायेंगे (यहां पर आकाश है, पर इसके ऊपर आकाश नही हैं) जिसे Above time & Space कहा गया हैं। उदाहरणार्थ :- एक आदमी भेज दिया गया, घड़ी बांध दिया - उसमें एक बजा है। जायेगा ऊपर। वहां से लौटकर आयेगा। वहां से लौटकर आयेगा तो एक ही बजा होगा। तब तक दुनियां बदल गई, परन्तु उसकी घड़ी में एक ही बजता है। जब नीचे आगा तो घड़ी शुरू हो गई - ये अनुभूतियां है। "सर्वनिरोधात्" याने सबका निरोध हो जाता हैं देशकाल से परे जाने पर। निरोध माने नाश नहीं होता है। आप उसको टाल सकते हैं। इसी जन्म में टाल सकते हैं। अब आगे सिद्धावस्था को प्राप्त करो। राम, कृष्ण जो हैं इसी अवस्था को प्राप्त किए हुए सिद्ध हैं। इन्हें अवतार कहा जाता है। इन्हें अवतार क्यों कहा गया, क्योंकि ये मां के पेट से जन्म नहीं लेते। ये जब चाहते हैं, संसार में आते हैं और संसार का कार्य करके चले जाते हैं। ये मेरा छोटा - सा अनुमान है। केवल अनुमान ही नहीं, हम इस मत पर आ गये हैं। ऐसा मैंने समझा, पाया और आपके सामने रख दिया। लेकिन, इस सबके लिए दृढ़ भूमि का निर्माण करना होगा या भूमिका दृढ़ करनी होगी।

कबीरदास जी ने एक दोहे में कहा है -

"हद से अनहद हुआ किया शून्य असनान।
मुनिजन महल न पावई तहां किया विश्राम॥"

हद माने सीमा - ये अभी जो कहा है [illegible] काल से परे, देशकाल जहां तक हो उसे 'ह[illegible] कहा है। इससे परे Above time & space जो है, वह अनहद चले जाने की स्थिति है। य[illegible] उस शून्य में स्नान किया, ऐसा इन्होंने बतलाया यहां तक आकाश है, इससे आगे आकाश नहीं [illegible] इस आकाश से ऊपर चले जाने के बाद शून्य [illegible] वहां स्नान किया। "मुनिजन महल न पावई त[illegible] किया विश्राम" - जिस रहस्य को जाने पाने [illegible] मुनियों को भी सफलता नहीं मिली, वह अव[illegible] स्थिति केवल तपस्या से, वास्तविक पुरुषार्थ [illegible] साध्य हैं "तहां किया विश्राम" - अर्थात् व[illegible] पहुंचना चाहिए, पहुंचना हैं। यह शून्य [illegible] सुषुप्तावस्था कहा गया है। इस अवस्था में प्रकृ[illegible] भी सो जाती है। यह स्थिति न स्वप्न की है [illegible] जागरण की। इसमें आपको अपना या पराया [illegible] बोध नहीं रह जाता। इसी को हम समा[illegible] कहते हैं। शून्य से आगे माने अकार, उकार ए[illegible] मकार के आगे जो गये, वह प्राप्त अनुभूतियों [illegible] ही मगन रहता है। मुस्कराता रहता है। महात्[illegible] कबीर ने कहा भी हैं :

"शून्य शहर तक सब गये, शून्य से आगे नाहि[illegible]
शून्य से आगे जे गए, ते मन्द मन्द मुस्काहि॥"

यह कबीर की अनुभूति थी। हमारे प[illegible] वार में भी ऐसे साधक हैं। एक साधिका हम[illegible] परिवार में मुंगेली के साधक शिष्य डा भानुगु[illegible] की श्रीमती जी ही हैं। वह साधिका है। अ[illegible] लोगों ने उन्हें देखा है।

अब हमें विचार करना चाहिये कि ह[illegible] कहां हैं। कैसे हैं। क्या कर रहे हैं। अभ्[illegible] नहीं कर रहे हैं। कितना अभ्यास करते है [illegible] कितना मिलता है। अधिकारी व्यक्ति हैं [illegible] वेदांत या तर्क शास्त्र पढ़े हैं, उनमें स्वाभावि[illegible]

विचारणा शक्ति आवश्यक हैं अन्यथा उन्हें भी समझने में कठिनाई होती है। सद्गुरू (किसी योग्य अनुभवी) से जो दीक्षा प्राप्त होती है वह भावों के गूढ़ रहस्य को समझने की प्रेरणा देता है। प्रयास करना चाहिये, जो कहा जा रहा है उसे समझें। सम्भव न हो, समूचा कुछ समझ में न आये तो भी चिन्ता नहीं, कम से कम भाव को तो समझने का प्रयास करें। यह सब अभ्यास से होगा। अभ्यास से मुंह मत मोड़ो। सभी को शांति अनुभूति, आनन्द और जो जो चाहिए सब मिलता चला जायेगा। भूमि दृढ़ होती चली जायेगी। आप सामर्थ्यवान बनते चले जायेंगे। इसी से रामदास जैसे योगी संत समर्थ होते हैं और समाज का उपकार, अपना उपकार इसी से होता चला जाता है। ये योगी संत दिव्य लोक में रहते हैं। जरूरत पड़ने पर, समय पड़ने पर समाज सेवा के लिए आते हैं। शरीर इसीलिए धारण करते है, शरीर इसीलिए मिलता भी है कि समाज में आकर कर्तव्य करके, समाज का जो ऋण हम पर है उससे उऋण हों। तभी मुक्त हो पायेंगे तभी वास्तविक शांति मिलेगी। हम सब तभी "मैं और मेरा" के मायावी आवरण से मुक्त होते चले जायेंगे। समाज में विभेद नहीं, एकता बढ़ेगी। "वसुधैव कुटुम्बकम्" चरितार्थ हो सकेगा।

ऐसा तभी होता है जब साधुओं की संख्या बढ़े। साधु किसे कहते हैं? साधु उसे कहते हैं जो साधना करे, साधनारत हो। "साधना नाम साधु"। साधना निरपेक्ष वृत्ति से होना चाहिए। मान रहित, मोह रहित होकर साधना होना चाहिए। सुनने को मिलता है कि कुंडलिनी जग गई। वस्तुतः कुंडलिनी सोई हुई नहीं रहती, वह दबी हुई रहती है। कुंडलिनी के रूप में महा शक्ति मानव तन में भरी पड़ी है। साधना करने से वह आप अपना कार्य करती है। जो जो का[र्य] हैं अपने आप होते चले जाते हैं। ऐसा तभी होता है जब सुषुम्ना मार्ग खुल जाय।

"कैवल्य से...."

※ ※

सुख-दुख ये दोनों तो चोर-चोर मौसेरे भाई हैं। लोगों से कुछ मिल गया तो हंस दिये और कुछ चला गया तो रो दिये। हंस दिये और रो दिये। ये रोना तो रोना है ही, ये हंसना भी रोना है। क्यों रोना है? डर है कि चला न जाय, हाथ से निकल न जाय और ये किसी भी धर्म से दूर नहीं हुआ।

※ ※

✳ WHAT IS HERE AND THERE ✳

बहुत से लोग कहते हैं कि अरे भई, यहाँ वो नहीं मिलेगा आपको। वहां जाके सब कुछ मिल जायेगा। तो, यहां-वहां ये लोग जो सामने रखते हैं, इसका क्या तात्पर्य है ? यहां और वहां ये जो भागते हैं, ये Escaping है। ये Escapees हैं। वो ये ही कहते हैं – यहां कुछ भी नहीं है वहां सब कुछ मिल जायेगा आपको। यहां देव नहीं, वहां ही देव मिलता है तो इंग्लिश में इसको कहते हैं – H re is nothing and there is every thing Then, let us go where everything is available. I can cultur idea, it's an idea means they escape from work. An idea, means उत्साह बढ़ाना, अनुमोदन करना माने बहुत अच्छा काम करते हैं, करते चले जाओ। वो कुछ करने के लिये तैयार है लेकिन उसका साथी उसको शेयर करने के लिये तैयार नहीं। बहुत अच्छा, तुम करते चले जाओ–कहकर चला जाता है। This is also a kind of escaping. ये ऐसा क्यों उत्पन्न होता है ? हमारी बुद्धि में ऐसे विचार क्यों आते हैं कि यहां नहीं है, वहां है। ऐसा रहने से हमें कुछ नहीं मिलने का. वहां जाने पर, उस तरह से रहने पर सब कुछ मिल जाता हैं।

What is here and what is there. Let us know the difference of here and there. The difference of here and there is "T" ony. Here and here, second here plus "T" is equal to there. That means trouble. You are in trouble The trouble means to push us like a football For an example - english letter "T" is just like a Cross in english alphabet. This "T" (†) denotes us the Jesus was shine in world while he was put on the Cross (†), after that he came in the lime light. He was full of divine power after that.

You are just what is called "to and fro." Our likes, our actions our mov ments are only "to and fro" This I call trouble 'T' is trouble. We have got no definit aim. definit Goal that's why we are like an oscillator of a wall clock We call it 'to and fro'. Then 'T' is a trouble only If you remove the letter 'T', you will find everything is here. There is no peace (शान्त्यावस्था) at all

'To and fro' means wander. You are wandering here and there We are great wanderers. But we say - no, no I am telling you definitly here is nothing, everything is there Thus we are the great wanderers that's why T' is the only letter which differentiate the here and there. Those persons, those people are always in trouble because for them everything is there If we remove the letter 'T' everything is here only ! and all the troubles are vanished away !! Thats all.

C/16 - A

प्रेरक उद्‌बोधन

o- आज जो हमारा धर्म है वह उप-जीविका के लिये हैं, जीविका के लिये नहीं। प्रत्येक व्यक्ति का अलग-अलग धर्म है। उसकी आदतें, उसके व्यसन भिन्न-भिन्न हैं और उसी के अनुसार वह अपना कार्य करता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति का मिलन नहीं हो पाता। प्रत्येक का मत अलग-अलग है। कभी विचार मिलते भी हैं तो कुछ काल के लिये ही मिलते हैं। इसीलिये गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि- "सर्वधर्मान् परित्यज्य"।

o- "मामेकम् शरणं व्रज" - "माम" मानें मेरी शरण में आओ, ऐसा अर्थ मैं नहीं करता। "शरणं व्रज" - गीता में व्रज धातु है, एक शब्द है। व्रज माने To go। जाओ तुम वहां जाओ अर्थात् वो जो आत्मा है उसकी शरण में जाओ। माने तुम अपने आपमें समर्पित होवो। हम इसी जनम में पहुच सकते हैं उस Goal में। लेकिन इसके लिये तैयारी चाहिए मृत्यु से मिलना पड़ता है। मृत्यु का आलिंगन करना पड़ता है। कोई मरता नहीं। बहुत से लोग मृत्यु के भय से छोड़ देते हैं। इसे छोड़ना नहीं है, करते रहना है तथा उस शक्ति को प्राप्त करना है। शक्ति माने आत्मा जो महाशक्ति है, Divine Power है, उसको प्राप्त करना है, उसकी शरण में जाना है अर्थात् अपनी शरण में जाना है।

o- प्रकृति को अघटित घटना पटीयसि कहा है। प्रकृति अपना कार्य करने में स्वयं पटुत है माने एकदम Exp rt हैं। जो Nature में Primordial है। उसको किसी की सहायता नहीं चाहिए। वैज्ञानिकों ने भी कहा है कि ये Beginning Less व Endless है। गीता में भी दिया है - "प्रकृतिं च पुरुषं चैव विद्धयनादि उभावपि"।

o- "स्व" में आने के लिए अथवा आत्मबोध होने के लिये आपको जैसा बताया गया है, जैसी दीक्षा दी गई है वैसे दृढ़ता पूर्वक करना है तभी आपमें आत्मशक्ति विकसित होगी।

o- अनेक जन्मों के नाना प्रकार के जो आवरण हमारी आत्मा को आच्छादित किये हुए हैं हमारी प्रगति में रूकावट है। उस रूकावट को अभ्यास से दूर करना है और कुछ नहीं। आवरण दूर हुआ कि स्पष्ट हुआ। जैसे बादल आते हैं सूर्य छिप जाता है और बादल हट गया, सूर्य प्रगट।

o- जिन्दगी में छोटे-मोटे जो धर्म कार्य करने पड़ते हैं, वो उप-जीविका है। उससे हमारे अभाव दूर नहीं होते। जीविका तो ये हैं- "समाधि साधन संजीवन नाम"- ये ज्ञानेश्वर ने कहा है। अपनी बुद्धि को जिस समय आप आत्मस्थ कर देंगे याने सुषुम्ना (Central Canal) में घुसकर, आज्ञा-चक्र में, मृत्यु केन्द्र को पार करके तूर्यावस्था में आयेंगे तब वह शांत्यावस्था होगी। वहां आने के बाद, जो अभाव हैं सब दूर हो जायेंगे अर्थात् जीवन सम्यक्

होगा। हम सत् को प्राप्त कर लेंगे। गीता में लिखा है- "ना सतो विद्यते भावो, न भावो विद्यते सतः"।

०- जिस शक्ति से हम बोलते हैं, शरीर को उठाते हैं, सारे कार्य करते हैं, उसे हम उठा नहीं सकते। उस शक्ति ने ही हमें धारण किया है। यह शक्ति वही है - आत्मा जो परम है। जिसका नाम वेदों में सत् कहा गया है।

०- जैसा आपको सिखाया गया है उस प्रकार से स्मरण कर, समाधि माने बुद्धि को पीछे लगा देना चाहिए और होशोहवाश में रहकर (प्रज्ञा पूर्वकम्) ये सत् कार्य करना चाहिए। इस कार्य सिद्धि के लिये हमें चाहिए उसकी पकड़, उसकी धारणा, उसको बलपूर्वक याद करना जैसा बताया गया है, सिखाया गया है, अभ्यास करना चाहिए। तब अभयं सत् संशुद्धि- आप निर्भय हो जायेंगे। ये जीवन तब सम्यक् होगा। ये जीवन तब पूर्ण होगा।

०- भारतीय संस्कृति में एक विद्या है जिसको राजविद्या कहा गया है। यह विद्या विराट हैं। महान है और अति गोपनीय भी है। इसे पूरी तरह गुरुमुख, गुरुदिश मार्ग से प्राप्त कर आप सारे अवगुण, बन्धन, रुकावट, दुःख दूर कर सकते हैं। आप शुद्ध हो जाते हैं। सक्षम हो जाते है।

०- आपके मन में ये संकल्प चाहिए कि मैं हूं और ये मुझे प्राप्त करना है। वह आपका ही है। प्रक्रिया के द्वारा खाली उसे विकसित करना है। दिव्य होना है अर्थात् स्थिर होना है। जहां स्थिर हुए कि सारी अशांति दूर हो गई। फिर जो आपके भाव में आयेगा बराबर होगा। "यम यम कामम् कामयते संकल्पात् समोविहिति"।

०- "प्रकृति की क्रिया का नाम धर्म है"- उसका एकदम पर्याय है सहज कर्म क्रिया। गृहस्थ आश्रम में रहते हुए, कर्मों को भोगते हुए, सामाजिक बन्धन व नियम में रहते हुए जो कुछ संसार में आपको करना है वो करते रहिए और ये काम भी कीजिए। स्वाभाविक रूप से, सहज बनकर दस मिनट, पन्द्रह मिनट, बीस मिनट भी आप अभ्यास करेंगे तो आपका कल्याण होगा। गीता में दिया है- "सहजम् कर्म कौन्तेय सदोषम् अपि न त्यजेत्"।

०- अन्तःकरण में मन प्रधान है और मन का काम है पकड़ना तथा छोड़ना। तो मन को एक बड़ा कांटा पकड़ा दो। जो तत्व बताया है आपको कि ध्यान में लावो, उसे ध्यान में लाओ। ध्यान करना नहीं बोलता, ध्यान में लाना है। तब तक वो धारणा है। जब ज्योति सामने आ जाती है तब वह ध्यान होता है।

०- "देशबंधस्य चित्तस्य धारणा" - आपको एक देश में एक जगह फोकस (Focus) लगाना है। हम भ्रूमध्य में देखते हैं। उसका स्थान दोनों भौवों के बीच ललाट में है। जिसे पौरा- णिक लोग गंगा, जमुना, सरस्वती तथा तांत्रिक इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना कहते हैं। ये त्रिवेणी

संगम है। तो धारणा के साथ धीरे-धीरे नित्य अभ्यास करते रहने से दीर्घकाल में "सत्कारा सेवितो दृढ़भूमिः" याने आपकी भूमि दृढ़ हो जायेगी।

०- निर्गुण और सगुण साकार का झगड़ा बहुत पुराना चला आ रहा है। बात ये है कि जब वो निर्गुण निराकार है तो क्या है? वह शक्ति है। वो निर्गुण निराकार है तो कुछ करेगा क्यों? लेकिन नहीं, वो कुछ न करते हुए भी सब कुछ करता है और सब कुछ करते हुए भी कुछ नहीं करता है। वह सगुण साकार है तो हम उसका अध्ययन करते हैं जब उस तत्व के जो गुण वर्णन किये गये हैं, उन्हें कण्ठस्थ कर लेते हैं और फिर परीक्षा द्वारा जब हम पदवी से विभूषित हो जाते हैं तब वही गुण हमारी शक्ति बन जाती है। उसके द्वारा आप अपने जैसे औरों को भी उस पद पर ला सकते हैं। वही गुण आने से वो समर्थ हो जाता है- "कर्तुम अकर्तुम अन्यथा कर्तुम ससक्तः"।

०- "ब्रम्हानन्दम परम् सुखदम् केवलम् ज्ञानमूर्तिम" - ज्ञान मानें आत्मज्ञान वहां एक मात्र ज्ञान रह जाता है। ये कैवल्य है। वही परमपद आत्मपद है। आत्मा ये शब्द संकेत मात्र है। Indicator है। इससे संकेत प्राप्त होता है। "आ" से आनन्द स्थिति का संकेत अन्नमय कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष, विज्ञनमय कोष से होते हुए आप आनन्दमय कोष में जाते हैं तब आप स्थिर होते हैं। इसी का नाम है - मोक्ष, शांति, कैवल्य।

०- जो लोग कहते हैं, मेरा मन चंचल है स्थिर नहीं होता, क्या किया जाय। उनसे मेरा यही कहना है कि आपको केवल अपने चित्त को, अपने मन को एक देश में बांधना है। जैसा दीक्षा में दिया गया है। वो ध्यान मे लाना है। मन को लगा देना है। पकड़ा देना है। बस, केवल पकड़कर रखना है दोनों भौंहों के बीच ललाट में। फिर बुद्धि से अन्दर देखिए कि मन पकड़कर रखता है या नहीं और तटस्थ हो जाओ। ये आदेश है। आदेश माने इसका पालन हो। है कि नहीं। होता है कि नहीं। ये नहीं चाहिए, बस Wait & See होने दो जो होता है। ये भव है। ये कुरू नहीं है। भव माने अपने आप होता है। ये happening है। कुरू माने करना (doing)। यहां करना केवल इतना है जो रास्ता आपको बताया गया है - ऐसा ऐसा बैठना, ऐसा ऐसा ध्यान में लाना है और बस चुप हो जाओ।

०- ये सत्य है कि हम देश और काल से परे पहुंच सकते हैं लेकिन हम गृहस्थ हैं। हमारे दुनिया भर के बन्धन हैं। हमारी आयु है शरीर की। प्रत्येक व्यक्ति भिन्न है। प्रत्येक व्यक्ति के भोग भिन्न हैं। प्रत्येक व्यक्ति के सोचने, समझने और करने की धारायें भिन्न हैं। पद्धति भिन्न है। लेकिन भिन्न होते हुए ये जो आत्म ज्ञान है - "स्वस्वरुप का अनुसंधान" (Research) कभी नहीं छोड़ना है। उसको देखना और साक्षात्कार करना है।

❋ ❋ ❋

दीक्षा के बाद क्या पाया ?

आत्म-ज्ञान अभीष्ट है जिनका, दूसरे अर्थों में आत्म-साक्षात्कार मंज़िल है जिनकी, उनके लिए सद्‌गुरू की शरण में आना अनिवार्य होता है। सद्‌गुरू के चरणों में बैठकर दीक्षा लेनी होती है। इसी दीक्षा के माध्यम से सद्‌गुरू आत्म-ज्ञान के मुमुक्षु को मार्ग बताते हैं। इसी मार्ग पर चलते-चलते साधक अनेकानेक अनुभवों से गुजरता है। भौतिक, अभौतिक, अतिभौतिक और आध्यात्मिक। कभी भौतिक-सुखों और आर्थिक अभावों का सामना करते आध्यात्मिक सम्पन्नता और ऊंचाई को पाता है। कभी भौतिक सफलता के साथ अध्यात्म की दृष्टि से शून्य-बिंदु Zero-point) पर ही ठहराव बना रहता है। ऐसे में उचित ही था कि अपने गुरू-भाई-बहनों के समक्ष इस संबंध में प्रश्न रखते–"दीक्षा के बाद क्या पाया ?" सो, यह प्रश्न रखा गया।

यद्यपि प्रश्न बहुत सरल है तथापि उत्तर उतना सरल नहीं था संभवत:। शायद, इसलिए उत्तर के लिए शब्दों की सीमा निर्धारित की गई थी, अधिक से अधिक पांच छ: पंक्तियां।

प्रत्येक व्यक्ति जीवन में कुछ न कुछ पाना चाहता है। परन्तु पाता कौन है ? वही जो खोजते खोजते खो जाता है उसी में जिसे खोजने निकलता है। उसके सिवाय सब कुछ भूल जाता है। बस फिर क्या है ? जैसे ही खोता है, उसे पा लेता है क्योंकि खोना ही तो पाना है तो बस 'खो' जा–

खुदी को ऐसा मिटा कि तू न रहे।
तेरी हस्ती की रंगो बू न रहे। क्योंकि
खुदी को मिटाओ न जब तक,
खुदा नहीं मिलता।
"खुदी" अर्थात मैं और मेरा।

कुछ गुरु बंधु और भगनियों से प्राप्त उत्तर प्रकाशित किये जा रहे हैं। आइए, पढ़ते हैं उन्होंने क्या पाया है।

० ०

प्रश्न बहुत गंभीर है और जब पाने की आकांक्षा, इच्छा नहीं रही अथवा कम हो रही है पूछा जा रहा है क्या पाया ? इस विषय पर कभी विचार किया नहीं, परन्तु एक बात समझ में आती है जो पाई जा सकती है वो खो भी सकती है। पाना, लेना-देना व्यवहार में लागू होता है आध्यात्मिक क्षेत्र में नहीं। हमने दिया ही क्या है जो पाने की उम्मीद करें। पाने के पहले खोना पड़ता है ताकि खाली स्थान भर सके . . . अस्तु

बाहरी वस्तुओं का आकर्षण कम होता जा रहा है। सामाजिक मेल-जोल कम हो गया है-उसमें कुछ विशेष रुचि नहीं होती। काम स्वत: होकर कम कर लिया है-उस विषय में कोई महत्वाकांक्षा नहीं रही प्रायवेट प्रेक्टिस में जो कुछ मिलता है उससे क्षोभ या खुशी नहीं होती अर्थात दूसरे शब्दों में शांति और संतोष बना रहता है। कभी-कभी अचानक असंतोष, उद्वेग उभरकर आ भी जाता है तो अल्प समय के

लिए।

अकस्मात् कल्पनीय कठिनाइयों में मदद मिलती हैं।

डा. प्र. वि. आचार्य
गुरुकृपा सर्जिकल व मेटर्निटी सेंटर
रविनगर : रायपुर

दीक्षा के बाद मैंने पाया है सत्गुरु की स्नेहिल छत्रछाया एव मार्गदर्शन तथा एक आत्मिक परिवार। इस पथ पर चलते हुए जीवन में जो अन्य उपलब्धियां हुईं वे चार लाइनों में इस प्रकार हैं–

दीक्षा के बाद, दिशा विचारों को मिल गई।
मेरी लेखनी को विषय, मन को शांति मिल गई।
भावों को मेरे आज है अभिव्यक्ति मिल गई।
मेरी थी जो, मुझे वो आत्म-शक्ति मिल गई।

डा. (श्रीमती) के. के. पंधेर
मेडीकल कालेज, ग्वालियर
६७, आनन्दनगर, रायपुर

परम पूज्य गुरुजी से दीक्षा के बाद मुझ में आत्म-विश्वास बढ़ा है और आत्म-शक्ति महसूस करती हूं। इस प्रश्न का उत्तर शब्दों में देना मेरे लिए कठिन है। पर इतना जरूर हैं कि After it I feel life full of treasures.

डा. (कु.) हनीफा तालिब
मेडीकल कालेज हास्टल, रायपुर

पूछा गया है कि दीक्षा के बाद क्या पाया। निश्चित ही मंज़िले-मकसूद तो नहीं पाई है, अभी तक। हां, अगर प्रश्न का आशय अपने अन्दर होने वाले अन्तर से है तो कहूंगा कि दीक्षा के बाद छः वर्ष की इस अवधि में जो स्वयं में अन्तर पाता हूं, वह यह है कि दीक्षा के पहले दूसरों के गुण-दोषों और किये, न-किये पर दृष्टि रहती थी अब वही दृष्टि वहां से धीरे-धीरे हटकर स्वयं के अवगुणों पर आती जा रही है और पाता हूं "मुझ सा बुरा न कोय।"

सुगनामल तेजवानी
न.व.पारा - राजिम

परम पूज्य श्री सद्गुरु के चरणों में पहुंचने के बाद से आज तक यह समझा कि प्राप्ति श्री सद्गुरु की कृपा के अधीन है। बिना उनकी कृपा के साधक को कुछ भी नहीं मिल सकता। शरण में आने पर ऐसा अनुभव अब हमेशा रहता है कि गुरुजी साथ में हैं। अन्तस में वो विराजमान हैं। उससे मन, कर्म व वचनों पर कंट्रोल हो रहा है। गुरुजी शिष्य को सही मानव बनाते हैं। मन की वृत्ति का निरोध हो रहा है ऐसा अनुभव कर रहा हूं। शिष्य की लगन साधना में, श्री सद्गुरु चरणों में कितना प्रेम व समर्पण है यह साधक की कसौटी है। इन्हीं बातों पर प्रगति निर्भर है। ऐसा मैं समझ रहा हूं, आगे प्रभु मालिक हैं।

आर. सी. मिश्र (गौतम)
उप-निरीक्षक, कोतवाली
रायपुर

गूंगे को कोई स्वादिष्ट व्यंजन खिलाकर पूछा जाय तो गूंगे की जो स्थिति होगी वही स्थिति इस प्रश्न का उत्तर देने में मेरी है। इसे वाणी द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता, ये अनुभवगम्य है। कहा गया है--"कहत कठिन

समुझत कठिन . . . पर भी शब्दों के द्वारा जो पाया है उसे बताने का प्रयास करता हूं:–

परम पूज्य श्री सद्गुरू जी की शरण में आने के पश्चात उनके द्वारा दिये गये मंत्र व अभ्यास रूपी औषधि से विकार (मानस रोग-काम, क्रोध, मोह, लोभ) धीरे-धीरे दूर हो रहे हैं। पहले से बहुत ही आनन्द का अनुभव करता हूं। जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा है विकारों के अधीन से धीरे-धीरे मुक्त होने का अनुभव है। उनकी कृपा से मुझे पूर्ण विश्वास है कि एक दिन पूर्णतः विकारों के अधीन से मुक्त होकर स्वाधीन होकर जीवन का जो उद्देश्य है वह अवश्य प्राप्त होगा।

योगेश शर्मा
शर्मा फोटो स्टुडियो
आमापारा चौक, रायपुर

प पू गुरूजी से दीक्षा के बाद बहुत कुछ मिला है वह सारांश में निम्नानुसार है–

१. आर्थिक–मांगा और एक डेढ़ माह के बाद मिला मकान।
२. सामाजिक–जो लोग मेरे विरुद्ध थे आज वे करीब हो गये हैं।
३. वृत्तियां – पूर्व में बहुत क्रोधी था। अब क्रोध में कमी आ गई है। पूर्व में संकुचित था अब गुरू परिवार व अन्य के यहां निःसंकोच आना–जाना अच्छा लगने लगा है। विषम परिस्थितियों में बहुत परेशानी होती थी अब सामान्य अनुभव करता हूं तथा कार्य सुगमता से हो जाता है।
४. शारीरिक –स्वास्थ्य में, निश्चितता के फलस्वरूप परिवर्तन आया है।

बी. एस. वैष्णव
महानदी आयाकट विकास प्राधिकरण
डी. के. अस्पताल के सामने, रायपुर

प. पू गुरुजी से दीक्षा प्राप्त करने के बाद अपने आप में आत्म-विश्वास का विकास पाया है और कई एक बार कठिन परिस्थितियों से पार पाने का अद्भुत साहस भी मिला है। बस, ऐसा हुआ कि काम स्वतः ही आसान होते गये हैं और समय पर पूरे भी हुए हैं। पहले ऐसा नहीं था एक उलझाव था अब कुछ सुलझ रहा है। ऐसा कुछ भी न करने के बाद भी हुआ है।

हरीश तेजवानी
राजकुमार कालेज, रायपुर

दीक्षा के बाद से स्वयं को काफी शांत एवं मानसिक शांति का अनुभव करता हूं और जब भी कभी कोई परिस्थिति परेशान करती है तो गुरूजी का स्मरण एवं ध्यान करने से तुरन्त सामान्य हो जाता हूं।

नामदेव तेजवानी
सी./१४, पेंशनबाड़ा, रायपुर

दीक्षोपरांत के पूर्व भी धर्म के प्रति मेरी अभिरुचि थी। नियम से स्वाध्याय व अन्य धार्मिक क्रियाओं के प्रति पूर्ण आस्था थी। सद्गुरु चरणों में आने के बाद वही आस्था सत्य के प्रति क्रमशः दृढ़ होती चली गई है। वर्तमान में मैं पूर्णरूपेण गुरुचरणों में समर्पित हूं। आज वही धार्मिक क्रियाओं का एक-एक शब्द समझ में

आते जा रहे हैं। उन्हीं क्रियाओं से आनन्दानुभूति होती है। चौबीस तीर्थंकर का जो अर्थ पूज्य गुरु चरणों में मिला अर्थात् पूर्णरूपेण गुरुमुख मार्ग में अग्रसर होकर जो चौबीस तत्व को जान चुके हैं प्राकृतिक रूप से वही भाव मेरे मन में सदैव विद्यमान रहते हैं। गुरुजी की जीवनी पढ़ने से हर बार कुछ नई बात मिलती है।

सद्गुरु देय लगाय, मोह नींद जब उपसे में तब कछु बनहि उपाय। मेरी हर शंका का निवारण गुरु स्मरण मात्र से दूर होता चला जा रहा है। आनन्दित हूँ। इसी आनन्द की कामना करता हुआ गुरु चरणों में शत्-शत् नमन।

वीरचन्द जैन
पेन्डरा

दीक्षा उपरांत ऐसे कितने ही अनगिनत अवसर आये हैं जहां प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में श्री सत्गुरुजी ने मुझे व मेरे परिवार को उबारा है।

श्री सत् गुरुजी के स्मरण मात्र से ही मानसिक शांति प्राप्त होती है एवं मनोबल बढ़ता है। श्री सत् गुरुजी के रूप में मुझे तो साक्षात ईश्वर की प्राप्ति हुई है और मैं यही कह सकता हूं–

"त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बंधुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वम् मम देव-देव।

राकेश ना. यादव
द्वारा – श्री ए. के. शर्मा
विवेकानन्द स्कूल के पीछे
न्यू कैलाशपुरी, रायपुर

※ ※

※ प्रत्येक व्यक्ति स्वतन्त्र है। प्रत्येक व्यक्ति का अपना धर्म है। "धारणात् धर्म इत्युच्यते"– धारणा जो हमारी है अर्थात हम जो कार्य करना चाहते हैं उस विचार का एक संकल्प बनाते हैं, प्लान बनाते हैं और सक्रिय होते हैं। अब काम हो गया, मकान बन गया, पैसा मिल गया, लेकिन भय हमारा दूर नहीं होता। और जो बंधन है, जहां-तहां जिसके आधीनता कहा गया ये भी दूर नहीं होता। इसलिए "धारणात् धर्म इत्युच्यते" मैं अपने अनुभव से आपके सामने रख रहा हूं।

※※

* तुम्हें नहीं पहिचाना हमने *

तुम्हें नहीं पहिचाना हमने, अब भी हम इतने नादान।
तुझको कोई जान सके, है क्या, यह इतना आसान ॥
तुझे जानने हम जो जाते, हम खो जाते, तुम ही जाते,
क्या है कौन, किसे बतायें, राज किसी के समझ न आये।
व्यर्थ भटक रहा इन्सान ॥

जनम जनम से भटक रहा था, मैं अपने ही खोज में,
मिला दिया मुझी से मुझको, तुमने मुझको दी पहिचान।
है यह तेरी कृपा महान ॥
ओम् क्लीम् के उद्‌गाता, मुझसे तेरा क्या नाता,
अंत:शक्ति के द्वारा खोलते, परब्रह्म के विलयन करते।
ह तुम अन्तर्यामी यान ॥

छद्मवेश में कब तक रहते, तेल्हाबा औ दुर्ग धरा पर,
प्रकट हुई तेजस्वी किरणें, निराकार. निर्बीज भेदकर,
हो अवनीश्वर, इस भू धर पर, वसुंधरा हुई कृतार्थ तुझको पाकर।
हो तुम भी आखिर इन्सान ॥
तुम क्या करते, यह सब कहते या बैठे बैठे केवल मुस्काते,
मूसल से "ईगो" क्रश करते, चर-चर में चैतन्य चमकाते।
है छेड़ा यह अभियान ॥

गाड़ी में हम दौड़ लगाते, मंज़िल नहीं पाते, समय गंवाते,
गुरु ही चालक, गुरू ही मंजिल, गुरू हो गाड़ी, समझे नहीं अनाड़ी।
रहेगा कब तक रे अजान ॥
मेरा तेरा का यह फेरा, मिले गुरू तो हुआ सबेरा,
नाक, कान है कब तक पकड़ा, एक ही स्पर्श से मिटे बखेड़ा।
साधो मुक्त समान ॥

अदृश्य में दृश्य समाहित, है परम शक्ति का खेला,
मेला में चल पड़ा अकेला, ये अलबेला, दे दिव्य शक्ति का भान।
याद रहे यह तेरी पहिचान ॥
जितना भी हम अंदर जाते, थाह तेरी हम कभी न पाते,
माते माते क्रंदन करते, हो तुम शक्ति महान।
हृदय में हो विराजमान ॥

जिसने अपने को जाना, तुझको भी उसने पहिचाना,
करत बेगरजी प्रीति. है यह कोई बिरला दीवाना,
लुटा खजाना, फिर नहीं आना, पीछे पछताना।
हो तुम सर्वज्ञ महान ॥

डा. प्र. वि. आचार्य
रविनगर, रायपुर

दिनांक १-७-९३

सत्गुरू महिमा अनत है

[शिष्यानुभव]

☆ सप्त - द्वीप - लोक के दर्शन ☆

एक भीड़ है जिसमें मैं भी शामिल हूं। भीड़ के सामने सीने की ऊंचाई तक की दीवाल है। दीवाल के उस पार पानी ही पानी है, अथाह, दूर दूर तक विस्तीर्ण, ओर- छोर रहित। तमाम भीड़ की दृष्टि पानी पर है। एक नाविक एक छोटी - नाव, जिसमें बमुश्किल एक व्यक्ति ही सवार हो सकता है, लेकर आता है और कहता है कि जिसे सैर करनी हो, वह एक रूपया दे, तो सैर करा दूं। उस भीड़ में से केवल मैं ही उस नाविक को एक रूपया देता हूं और दीवाल फांदकर नाव पर सवार हो जाता हूं। नाविक ने नाव खेनी शुरू कर दी और इतनी दूर ले आया है कि न वह भीड़ दिखती है, न किनारा और न ही दीवाल का कोई चिन्ह दिखाई पड़ता है।

नाव पर बैठे - बैठे मैं देखता हूं बहुत दूर सात दीये टिमटिमा रहे हैं एक पंक्ति में। जुगनू की तरह प्रकाश है उनका। नाविक से मैं नाव दीयों तक ले चलने को कहता हूं। नाविक मुझे वहां तक ले आता है। पास पहुंचते ही मैं देखता हूं जो दिये बिन्दु के आकार के थे, बड़े बड़े चमकीले गोलों में परिवर्तित हो जाते हैं। यह पर चारों ओर पानी ही पानी है, बस्ती का ना नहीं। फिर मुझे लगता है यहां अवश्य कोई बस है, सप्तद्वीप नामक।

फिर इस बस्ती की ओर दिखता है का विशाल फैलाव। यहां आकर हमारी नाव में धंस जाती है। नाव धसने के बाद मैं नावि से पतवार लेकर रेत में गड्ढा खोदने लगता हूं थोड़ा खोदने के बाद उस गड्ढे में पानी भर आ है। मैं नाविक से गड्ढे की थाह पूछता हूं नाविक कहता है - "मैं बताता हूं।" अब मैंने नाविक का चेहरा नहीं देखा था। जैसे नाविक ने कहा कि मै बताता हूं, मैं उसके चे की ओर देखता हूं, तो पाता हू कि ये तो हम परम पूज्य गुरूजी ही हैं।

- अशोक वासुदेव तिवारी
श्री वासुदेव योग आश्रम
बड़ा बाजार, मुंगेली, 495 33
जिला - बिलासपुर (म. प्र.)

※ ※

※ आप भी अभ्यास करके आत्म शक्ति प्राप्त कर सकते हैं। आत्मा जो परम है उस परम पद, परम धाम में अपनें आप को ले जा सकते हैं। वो मार्ग है अन्तर्मार्ग सुषुम्ना (Ependymal lining of Central Canal)।

सत्‌गुरु महिमा अनंत है

(पू. श्री गुरुजी के सानिध्य में)

लगभग १९८०-८१ में अपने बचपन के मित्र डॉ भानु के यहां बैठा था, मुझे अपनें अंदर ही अंदर विशेष प्रकार के तीव्र स्पन्दन महसूस हो रहे थे। साधना के क्षेत्र में १० १२ वर्ष हो गये, परन्तु ऐसा अनुभव कभी नहीं हुआ, मुझे ताज्जुब लग रहा था। इसके मूल में दो कारण हो सकते थे-भानु ने काफी प्रगति कर ली हो अथवा वहां किसी संत महात्मा का निवास रहा हो। यह बात मुझे काफी बाद में मालूम हुई कि पू गुरुजी उसी कमरे में रुकते थे, इसके बाद श्री गुरुजी के दर्शन करने का सिलसिला चला। अनेकों बार ऐसा हुआ कि मैं पहुंचा और पता चला कि गुरु जी आज ही गये। ऐसा सुना व पढ़ा था कि सच्चे सन्तों के निवास में एक उच्च दिव्य सत्ता का वास होता है, अतः वहां ५-१० मिनट शांत बैठना चाहिए. इस कारण पू गुरुजी की अनुपस्थिति में कुछ देर बैठता था। बीच बीच में तीन-चार वर्षों तक दर्शन होते रहे। कुछ न कुछ मिलने की लालसा से आना होता रहता था। पूछने की विशेष इच्छा नही थी, आंतरिक अनुभव की इच्छा जरूर थी। दर्शन के समय और बाद में घर जाकर तुरन्त ध्यान में बैठ जाता था। इस प्रकार के ध्यान में मन शांत हो निर्विचार हो जाता। "ध्यानं निर्विषयं मन." ऐसा कहा गया हैं। इस अनुभव से पू. गुरुजी पर विश्वास और श्रद्धा बढ़ने लगी और बार-बार मिलने की इच्छा होती थी।

सन् १९९० में रायपुर में गुरु पूजन समारोह का आयोजन हुआ-गुरु परिवार में काफी मित्र, सहपाठी और परिचित थे। फिर भी संयोग ऐसा हुआ, मुझे छोड बहुतों को निमंत्रण व सूचना मिली। प्रातः गुरु पूजा में केवल परिवार के होते हैं अतः शाम के सार्वजनिक प्रोग्राम में आमंत्रित न होते हुए भी आ पहुंचा यहीं भानु ने दूसरे दिन केवल गुरु परिवार के सामूहिक ध्यान में शामिल होने के लिए औपचारिक तौर पर कहा। मैं ऐसे अवसर की तलाश में था ही, मुझे तो मुराद मिल गई। हालांकि मैं अच्छी तरह से समझता था कि इसके लिए अनुमति पू. गुरूजी से ही लेनी चाहिए, परन्तु मैंने किसी भी प्रकार के नामजूरी का खतरा लेना ठीक नहीं समझा। क्या मालूम गुरूजी कहीं ना कह दें। दूसरे दिन चुपचाप सामूहिक ध्यान में उसी तरह शामिल हो गया जैसे अमृत मंथन के बाद बांटते समय राहु और केतु हो गये थे। आधे-पौन घंटे के ध्यान के पश्चात चुपचाप निकलना, याने पू. गुरूजी की अवहेलना हो जाती अतः दर्शन की लाइन में लग गया। जैसे ही मैंने नमस्कार किया कि पू. गुरूजी के मुंह से शब्द निकले "अच्छा जी चुपके-चुपके। इतनी भीड़ में भी ऐसा 'रिमार्क' उनके पूरी सजगता का द्योतक था, यह बाद में भी अनेकों बार अनुभव किया कि गुरूजी आंतरिक चेतना व बाह्य जगत के बारे में हमेशा पूरी तरह सचेत और सजग रहते हैं।

देर ध्यान के बाद मन जो शून्य निर्विचार हुआ, लगभग ५-६ घंटे तक वो स्थिति बनी रही। जब "नार्मल" आया तब उसका आभास हुआ।

इसके बाद सुबह शाम पू. गुरूजी के दर्शन के लिए डॉ पंधेर मेडम के यहां जाना शुरू हुआ। गुरूजी की "डांट" पड़ती – कहते भी थे, मैं किसी को बुलाता तो नहीं, फिर भी आ जाते हैं – इसका कारण समझ में आया दूसरों से दीक्षित साधकों को गुरूजी उनके प्रचलित मार्ग से विचलित नहीं करते - गुरूजी की इस नीति का बाद में भी अनुभव आया। जैसे ही कोई साधक आया वो समझ जाते हैं और उसे जाने का सौम्य इशारा कर देते हैं। परन्तु मेरे मन में न मालूम कैसे एक जिद्द निर्मित हो गई – उनके शिष्यों द्वारा वक्त बेवक्त आने के लिए डांट पड़ने के बावजूद आना चालू रखा। इसी दौरान एक दिन मैंने पू गुरूजी से दीक्षा के लिये निवेदन किया, इस पर उनकी प्रतिक्रिया ने मानो वज्रपात कर दिया, कहा– अपने पूर्व गुरू से अनुमति लेकर आना होगा। उन गुरू को देह छोड़े ८-९ वर्ष हो गए थे – कुछ सोच विचार कर उनके फोटो से अनुमति मांगी। इसी समय रात्रि के प्रवचन में गुरूजी के मुंह से शब्द निकले "आपको प्रूफ चाहिये तो रूद्रयामल गौरी तंत्र देखो, दो – तीन बार इसकी पुनरूक्ति हुई। मुझे स्मरण हुआ कि आत्मसाक्षातकारी सतगुरूओं के मुंह से अकस्मात जो शब्द निकलते हैं वो दिव्य सत्ता के ही होते हैं, इससे उनकी वाणी से सच अपने आप निकलता है (अर्थात् वहां तर्क नहीं) तुरन्त घर आकर श्री दुर्गा सप्तशती के अंतिम पृष्ठों पर अंकित, समापन के समय पाठ करने का मंत्र सिद्ध-कुंजिका स्तोत्र का पाठ किया किया (यह रूद्रयामल गौरी तंत्र के अन्तर्गत आता है) और सोने के लिये चला गया। प्रातः ३-४ बजे फिर इसी का पाठ कर कुछ देर ध्यान किया। ध्यान में दो हाथ आमने – सामने और मध्य में योगेक्षमं वहाम्यहं (लाइफ इंश्योरेंस का प्रतीक जैसे) दिखने का आभास हुआ। इसी दिन सुबह पू गुरूजी ने बिना किसी औपचारिकता के दीक्षा दी। मैं खुशी से नाच उठा, दिन भर मन ही मन मंत्र जाप शुरू कर दिया। उठते-बैठते, बाहर चलते फिरते, घर में काम करते हर समय मंत्र जाप। कभी-कभी यह अनुभव में आया कि आधी रात्रि में स्वप्न में मंत्र जाप चालू है, एक बार ऐसा लगा मानो मंत्र रीढ़ के अंदर सुषुम्ना में प्रवेश कर गया हो।

ध्यान में कोई सूक्ष्म शक्ति नीचे मूलाधार से उठती थी और सीधे सिर के ऊपर, भ्रूमध्य और नाक के ऊपर उसके स्पंदन लगते थे। ऐसा लगता था कि किसी अदृश्य शक्ति ने जकड़ लिया हो। अच्छा भी लगता था और डर भी कि कहीं अपने आप पर से 'कंट्रोल' न खो बैठूं। ३-४ दिन तक इस प्रकार का अनुभव हुआ बाद में जरूरी कार्य से बाहर जाना पड़ा, शंका हुई ये अनुभूति होती रही तो काम कैसे होगा शँका आने से अनुभव आना जो बन्द हुआ आज तक उसकी पुनरावृत्ति नहीं हुई। पू. गुरूजी ने बताया कि "वृत्ति" के संकोच से ऐसा होता है चिन्ता की बात नहीं।

लगभग २॥ वर्ष से प. पू. गुरूजी के ठहरने की व्यवस्था हमारे यहां ही हो रही है यह मेरा सौभाग्य ही है। इस बीच एक आत्मसाक्षात्कारी सत्पुरुष, जिसने निर्बीज की स्थिति (निर्बीज अर्थात साक्षात ईश्वरत्व) प्राप्त कर ली हो के रूप में पू. गुरूजी की दिनचर्या, कार्य-

क्रम बहुत नजदीक से देखने का अवसर मिला, गुरुजी ने मुझे जासूस की संज्ञा दे रखी हैं। यहां उसका संक्षिप्त में वर्णन अपनी बुद्धि से प्रस्तुत है। जब तक थोड़ी बहुत दृष्टि थी वे हमेशा "एलर्ट" रहते थे। चाहे कोई नवागंतुक हो या पुराना जैसे ही गुरूजी के पास आया उसका हेतु उन्हें मालूम हो जाता है और उसी समय कुछ न कुछ सटीक अवश्य कहते थे जिससे वो अचभित हुए बिना नहीं रहता। यदि एक दो बार, किसी-किसी के साथ हो तो इसे महज संयोग कह सकते हैं। यदि बार-बार ऐसा हो तो उसमें कोई राज़ है, यह महसूस हुए बिना नहीं रहता। ऐसा लगता है कि मानसिक धरातल पर उस व्यक्ति के साथ एकाकार हो जाते हैं। उदाहरण-हमारे पड़ोसी श्री बालू भाई पटेल अपनी धर्मपत्नि का अन्तिम संस्कार क्रिया-कर्म, गुजरात में करके पहली बार गुरूजी के दर्शनार्थ आये। जैसे ही बालू भाई जी ने दण्डवत प्रणाम किया श्री गुरू जी के मुंह से उदगार निकले, 'राख गयो सो गयो।" आगे जीवन में कैसे रहना है, इस विषय पर लगभग पांच मिनट तक बोलते रहे।

एक बार हमारे यहाँ पानी नहीं था, अतः हाथ-मुंह धोकर, ऊंगली से किंचित इत्र लगाकर पूजा में बैठा। तत्पश्चात् नीचे गुरूजी के कमरे में जैसे ही प्रवेश किया, वे बोल उठे-"खुशबू आ नहीं सकती कागज के फूलों से"।

श्री गुरूजी की चैतन्यता इतनी तीव्र होती है कि जैसे ही कोई आहाते में प्रवेश किया, कमरे में उसके आने के पूर्व वह बैठते हैं कि कोई आया है क्या ?

एक बार किसी प्रख्यात प्रवचनकार संत को गुरूजी की जीवनी भेंट करने की तीव्र इच्छा होने लगी। किसी कारणवश देना नहीं हुआ, मैंने पोस्ट से भेजने का विचार किया। उस पर नाम, पता लिखकर सप्रेम भेंट लिखा, परन्तु पोस्ट नहीं किया और मुंगेली चला गया, जैसे ही आश्रम में पैर रखा गुरूजी बोल उठे "उस आदमी की धर्म की परिभाषा जची नहीं"।

पू गुरूजी आत्मिक रूप से शिष्यों से कैसे जुड़े हैं। यह इसी प्रकार है जैसे हमें शरीर के किसी भी भाग में दर्द हो, अपने स्नायु तन्त्र (नर्वस सिस्टम) द्वारा मालूम हो जाता है। इसी प्रकार पू गुरूजी को भी विदित हो जाता है, उन्हें तकलीफ भी होने लगती है, उदाहरण-इसी वर्ष ६ फरवरी ९३, दोपहर में दो बजे गुरूजी अचानक चिल्ला उठे "बिच्छू ने काटा-जरा देखो"। मैं और श्री जितेन्द्र दीवान ने पूरा बिस्तर छान मारा, कोई बिच्छू नहीं दिखा, इधर गुरूजी बार-बार बिच्छू काटने का जिक्र कर रहे थे। रात्रि में १० बजे डा शिंदे का फोन भोपाल से आया कि उनकी लड़की स्वीटी को सवा दो बजे सिजेरियन आपरेशन से बच्चा हुआ। उस समय ध्यान में आया कि बिच्छू काटने का समय यही था-सदेश आने पर उसका रहस्य समझ मे आया-उसी समय पेट में 'चिरा' लगाया गया था।

जनवरी, ९२ प्रथम सप्ताह, गुरूजी राय-पुर में श्री मीतू (पद्येर) के घर पर निवास था। शाम का समय २०-२५ लोग हाल में बैठे थे। गुरूजी अपनी तकलीफ के बारे में बता रहे थे "आज सुबह इतने जोरों से भूख लगी और साथ ही साथ, ऐसा लगा कि मानो शरीर से किसी ने एक परत निकाल दी हो। सुनने वालों में २-३

डाक्टर भी थे, उनका मत हुआ शुगर कम (हायपोग्लायसिमिआ) की वजह से हो सकता है। इधर गुरूजी बार-बार अपने तकलीफ का उल्लेख कर रहे थे। मेरे मन में एक विचार कौंध गया, मरते समय वेदना के कारण कोई शिष्य पूज्य गुरूजी का स्मरण करे, तो उनको कैसा लगता होगा। रात्रि में संदेश आया कि मुंगेली से कि श्री श्यामलाल गुप्ता जो कैंसर से पीड़ित थे, नहीं रहे। मैंने डरते डरते दूसरे दिन गुरूजी से पूछा "आपकी तकलीफ का मुंगेली वाली घटना से कोई संबंध तो नहीं-उन्होने कहा तुम समझ गये फिर दुबारा अपनी तकलीफ की चर्चा नहीं की।

सबसे अधिक आश्चर्यजनक, अविश्वसनीय घटनाएं हैं जब-जब (शिष्यों के) प्राणों पर संकट पड़े हैं और शिष्यों ने उन्हें याद किया, स्मरण किया गुरूजी तत्क्षण वहां पर मोजूद अथवा किसी दूसरे प्रकार से संकट टल जाता हैं। यह बात जैसे-जैसे शिष्य आपस में खुलते जा रहे हैं, प्रकट होते जा रही है। गीता में श्री कृष्ण ने कहा है "योगक्षेमं वहाम्यहं"। परन्तु यह हमेशा ध्यान में रहे कि यह "संकटकालीन आपात सेवा" है। उदाहरण- मेरे पिताजी, उम्र ८८ वर्ष गुरूजी को न मानने वाले, फरवरी, ९२ में बीमार पड़े, कमजोरी के कारण पैर बाथरूम में फिसल कर, लेट्रिन के पाइप में फंस गया। लोगों को आवाज लगाई, दोपहर का समय था कोई नहीं आया, तो अकस्मात गुरूजी को चेलेंज किया, गुरू बनते हो तो निकालो पैर। उस समय पू गुरूजी मुंगेली में थे। परन्तु न मालूम कैसे कहां से, बाथरूम में आये, पिताजी का पैर निकाला और चले गये। फिर क्या था परिवार में इसी बात की चर्चा।

अस्पताल से संबंधित-१०८ तापमान में मरीज के बचने की संभावना बहुत ही कम होती हैं। इलाज के साथ मन ही मन मन्त्र जाप व प्रार्थना, इस विधी से दो अलग-अलग मरीजों का तापमान ५-६ घंटों में कंट्रोल में आने का हमें अनुभव आया है। कुछ इसी प्रकार की विधि से एक मरीज की आपरेशन के बाद लगातार खून बहनें की प्रक्रिया बन्द हो कर जान बच गई। सितम्बर ९१ नवभारत एक्सप्लोसिव अभनपुर-मि. सिंग की पत्नि। इससे हमें यह विश्वास हो गया है कि एक उच्च शिक्षित (वास्तव में गुरू जी के रूप में या उनके माध्यम से) सदैव हमारी मदद कर रही है। कभी-कभी पू गुरूजी के शब्द अत्यन्त कठोर मालूम होते हैं पर उसका फल बहुत ही मीठा अर्थात् अनुकुल परिस्थिति निर्माण करनें वाला होता है। उदाहरण-रायपुर के किसी मिडिल स्कूल के टीचर का भाई व उसकी अम्मा, अपने दूसरे लड़के से परेशान थी। बरसों से शराबी था, घर की बहुत सी चीजें बेच खा गया सुधरने के कोई लक्षण नहीं। इन्होंने पू गुरूजी से दो तीन बार चर्चा की, वो चुप रहें। एक दो वर्ष बीत गये, उन्होंने फिर अपना दुखड़ा रोया। गुरूजी जोर से बोले-"अच्छी तरह से पिटाई करो उसकी" मां ने हृदय पर पत्थर रखकर गुरु आज्ञा मान, जमकर लड़के की पिटाई कर दी-उस दिन से लड़का सुधर गया, शराब की लत छूट गयी।

एक मां अपने सुन्दर, सुघड़ सुशील लड़की के भाग्य को ले रो रही थी। नयी-नयी शादी, दामाद शराबी, पत्नि को मारपीट करने वाला। बहुत देर तक पू. गुरूजी सब सुनते रहे, सुनते रहे। फिर अचानक जोर से बोल उठे 'तो ऐसी

बात है, उस मंगल-सूत्र को निकाल दो" सभी लोग स्तब्ध, गुरूजी क्या कह रहे हैं। पर लड़की का विश्वास, पूज्य गुरूजी का कहना मानकर मंगल सूत्र उतार कर तलाक ले लिया। ताज्जुब कि साल भर के अन्दर ही अन्दर, एक आफिसर ने, स्वयं मंगनी कर उस लड़की से शादी कर ली और अब सब प्रसन्न हैं।

ऊपरी तौर पर देखने से ऐसा मालूम होता है कि गुरूजी फालतू किसी को डांट रहे हैं, जिसमें उनकी एक व्यक्तिगत शैली है। परन्तु इस पर विचार करने से उनका हेतु स्पष्ट हो जाता है। साधक के अहम् को धीरे धीरे मोड़ना। जितना साधक में अहम् कम होगा उतना ही आध्यात्मिक मार्ग में गहरी पैठ होगी, प्रगति होगी इससे हम सचेत होते हैं। हमारी सीखने की तैयारी होनी चाहिये, पू गुरूजी "जगत में कैसे रहना चाहिये" यह बीच बीच में बताते रहते हैं। संत रामदासजी ने कहा है "आधी प्रपंच करावा नेटका"। सद्गुरू के रिमार्क पर उससे शिक्षा ग्रहण करते हुए, मानसिक रूप से जो साधक, जितना कम से कम रिएक्ट React करे, वो उतना ही आध्यात्मिक ऊंचाई पर है। ऊंचाई के शीर्ष शिखर पर वही साधक है जो कदापि रिएक्ट React न करे – यह सहज बात नहीं, कठिन परीक्षा है।

आपसी चर्चा के दौरान अधिकाधिक रूप से श्री गुरूजी के रहस्यमय व्यक्तित्व और प्रभाव की बातें खुलकर सामने आ रही हैं। मुझे जो अनुभव हुए हैं उसे छोटे-मोटे तौर पर लगभग पांच हजार से गुणा कर दें तो पू गुरुजी की व्यापकता का अनुभव लगाया जा सकता है। इस प्रकार के आदान – प्रदान का लाभ और उद्देश्य यही है कि सर्वत्र स्मरण रहे कि हम आध्यात्मिक मार्ग में एक समर्थ और शक्तिशाली सद्गुरू की छत्रछाया में पल्लवित हो रहे हैं। यह आत्म-विश्वास साधना के मार्ग में एक प्रेरक शक्ति है जो धीरे-धीरे आंतरिक विकास की ओर ले जाती है। और देर सबर, अपनी सांसारिक जिम्मेदारी सम्हालते हुए, जितना अधिक समय साधना में देगें, उसके अनुरूप अपनी परिपक्वता और आवश्यकतानुसार, कम या अधिक समय के लिये, अपने ही अन्दर की दिव्य सत्ता का अनुभव अवश्यमेव करेगें – यही प. पू गुरूजी का कार्य है।

– डॉ. प्र. वि. आचार्य
त्वचा रोग विशेषज्ञ,
रायपुर

⁂ ⁂ ⁂

- आत्मा की परिभाषा में उसे कहा है – तदेजत – वो चलता है। तन्नैजत – ना, ना वो नहीं चलता, कितना विरोधाभास है। तदवन्तिके – बिलकुल पास है, कहा है। हमारी सांस से भी अधिक पास लेकिन हम भूल गये हैं। फिर तद्दूरे-माने बहुत दूर है। "तदन्तरस्य सर्वस्य – सबका अंतर्यामी, सब जानता है। फिर कहा – नहीं, नहीं। तो ऐसी जिसकी परिभाषा है। ऐसा जिसका विश्लेषण है उसे कैसा समझा जाय। इसलिये परमात्मा को न समझकर अपने आपको हम समझें यही बहुत है।

बहुत देता है देने वाला

मेरे पति श्री प्रभाकर पांडे, इन्होंने प. पू. गुरुजी से दीक्षा ली थी। मैं भी दीक्षा लेने की इच्छुक थी। वैसा प. पू गुरुजी से पूछा। उन्होंने एक दिन तय करके मुझे दीक्षा दी। वह सन् ७६ था। जिस दिन दीक्षा ली उसी दिन प. पू गुरुजी के एक श्रेष्ठ शिष्य का "कुण्डलिनी जागृति" के अनुभव का पत्र मिला था और गुरुजी बहुत आनन्दित थे। वे बोले – आप बहुत अच्छे दिन आये हो।

दीक्षा के बाद मुझे अनुभव होना शुरु हो गये। एक दिन मैंने देखा प पू गुरुजी कुर्सी पर बैठे हैं और मैं उन्हे प्रणाम कर रही हूं। प्रणाम करते ही प पू गुरुजी के पैर के बायें अंगूठे से प्रकाश निकलकर मेरे मस्तिष्क में से मूलाधार में समा गया। एक दिन मूलाधार में त्रिकोणी यज्ञ-कुण्ड दिखा। उसकी ज्वाला अनाहत में आके समा गई। सर्पदर्शन और गुरुजी का दर्शन बहुत होता था। एक दिन मैंने देखा- मैं घर के तुलसी वृंदान के पास बैठी थी। अचानक मेरी नजर आकाश की ओर गई। मैंने देखा पूरे प्रकाश में गोप-गोपियों की भीड़ लगी हुई है। वे कृष्ण के साथ रास-क्रीड़ा में मग्न थीं। वे रंग-बिरंगी कपड़े पहनी हुई थीं। कृष्ण ने पीताम्बर पहना हुआ था और हाथ में, गले में माला पहनी हुई थी। उन्होंने मेरी ओर देखा। बस, मैं जग गई।

प. पू गुरुजी ने मुझे बेटी माना है। उसी अधिकार से वे स्नेह व दुलार करते हैं। स्वप्न में भी वे मुझे प्यार करते हुए (जैसे मेरे पिता मुझसे करते थे) पास ले रहे हैं ऐसे दिखता है। उनके सानिध्य में आने पर मुझे लौकिक व पार-लौकिक दोनों बाजू का विलक्षण अनुभव हुआ है। वे मेरे केवल सद्गुरु ही नहीं बल्कि व्यवहारिक गुरु भी हैं। मैंने खाना पकाना, रहन सहन, चाल चलन कैसे रखना, सबसे किस तरह का बर्ताव करना यह उन्होंने सिखाया। उनके प्रवचन से आध्यात्मिक और लौकिक रहस्य सहज रुप से स्पष्ट होते थे। गूढ़ और कठिन शब्दों का अर्थ सरल भाषा में बताते तब बड़ा विस्मय होता था। दीक्षा से मुझे आत्मिक शांति मिली। व्यावहारिक बल तथा शक्ति मिली। अब आनन्द के सिवा कुछ नहीं। प. पू गुरुजी ने इतना कुछ दिया है लेकिन क्या करुं। बहुत देता है देने वाला, पर आंचल नहीं समाय। इसमें ही सब कुछ आ गया और क्या लिखूं।

– सौ शीला प्र. पाण्डे
श्रीनिवास कालोनी,
रामनगर, वर्धा - ४४२ ००१

※ ※ ※

०– पुस्तकों में लिखा है कि तीर्थों व धामों में आने-जाने से ये फल मिलता है, वो फल मिलता है। आप लोग भी आते-जाते हैं मन्दिरों में, पर मेरा अनुभव है कि वैसा होता नहीं। हमें ये समझना है कि कैसे परिणाम अनुकूल हो, हमारे अभाव दूर हों और भय से हम मुक्त हों, हमें छुटकारा मिले।

नेत्रों से जल बहता है

दिनांक १०-६-९३ के पत्र से उद्धृत :

प. पू गुरुजी की सेवा के अवसर हेतु समीप न होने का बड़ा दुख होता है। उनके सामीप्य से मेरा अर्थ शारीरिक रूप से उनके चरणों के नीचे रहने से है वैसे मानसिक रूप से सदा उनके चरणों तले रहने का सुखद अनुभव सतत् रूप से होता है। इस अवर्णनीय सुख की व उनकी चमत्कारिक कृपा का अनुभव होता है तो बस नेत्रों से सतत् इतना जल बहता है कि उसकी नमी उनके चरणों तक अवश्य पहुंच जाती होगी क्योंकि वे अन्तर्यामी हैं।

प. पू. गुरुजी को पिछले वर्ष बड़ी परेशानी में बिना सही पता व पोष्ट का नाम दिये पत्र लिखा था वह उन तक पहुंचा या नहीं, लेकिन अद्‌भुत तरीके से हमारी शाला को सेन्ट्रल बोर्ड से दसवीं कक्षा तक मान्यता मिल गई। रिजल्ट भी आ गये। यद्यपि इस क्षेत्र में सबसे अच्छे परिणाम नहीं हैं फिर भी रिजल्ट काफी सम्मानजनक है। ७ में से ५ छात्र प्रथम श्रेणी में, १ द्वितीय, १ तृतीय श्रेणी में है। रिजल्ट शत-प्रतिशत है। कक्षा ग्यारहवीं की मान्यता हेतु कार्य उनके चरणों में सारे पेपर्स समर्पित कर शुरू किया था। परिणाम स्वरूप बोर्ड द्वारा नियुक्त टीम ने निरीक्षण में शाला को प्रगति पर काफी संतोष व आश्चर्य भी व्यक्त किया है। इसका श्रेय गुरुजी के चरणों से प्राप्त मार्गदर्शन को है क्योंकि शाला का प्रत्येक दिन का कार्य प्रारंभ करने के पूर्व अपनी कलम, चश्मा व चाबियां उनके ही चरणों में रखता हूं। उन पावन चरणों पर मस्तक रखते ही दिनभर का कार्य सुचारू रूप से करने में कोई परेशानी नहीं होती है।

जब भी वे ऐसा समझें कि मैं या परिवार का कोई भी सदस्य उनकी व्यक्तिगत रुप से सेवा कर सकता है तो अवश्य आदेश दें।

– रामकुमार मिश्र
गेवरा प्रोजेक्ट

* * *

Guruji Uvach

Man is microcosm, no no, it's a divine essence in which all attributes are united therefore the absolute become conscious of itself in all of its divers activities.

आल्हाद का क्षण

बहुत चाह और तलाश थी सद्‌गुरू की। यह कहना अतिशियोक्ति पूर्ण न होगा कि सद्‌गुरू चरणों में जाने को प्राण व्याकुल रहते थे। क्योंकि परम पूज्य सद्‌गुरू श्री गुरुजी से दीक्षा के पहले एक पुस्तक में पढ़ी ध्यान की विधि का मैंने प्रयोग किया था और मुझे एक अनुभव हुआ था। वह अनुभव इतना आकस्मिक था कि मै डर गया। उस अनुभव के बाद मैं अपने आपको चोराहे पर खड़ा पा रहा था। राह नहीं सूझती थी। मार्ग-दर्शक कोई था नहीं। अब मुझे सद्‌गुरू की आवश्यकता गहराई से अनुभव होने लगी। और मैं रात-दिन चाहने लगा था कि मुझे सद्‌गुरू मिलें।

अप्रेल, सन्‌१९८७में मेरे अग्रज श्री मनोहर जी तेजवानी नवापारा (राजिम) आये हुए थे। बात-बात में भैया ने बताया कि मैंने परम-पूज्य गुरुजी से दीक्षा ली हैं और फिर विस्तार से परम-पूज्य गुरुजी के बारे में बताया। मैंने भैया से परम-पूज्य गुरुजी के दर्शन करने और उनसे दीक्षा लेने हेतु इच्छा व्यक्त की। उन दिनों परम-पूज्य गुरुजी धमतरी गये हुए थे।

दिनांक २२-४-८७ की रात्रि १० बजे मनोहर भैया का पत्र प्राप्त हुआ जिसमें प. पू. गुरुजी के आने की सूचना थी।

दिनांक २३-४-८७ को दोपहर बाद मैं रायपुर गया। मनोहर भैया मुझे अपने साथ मेडिकल कालेज के केम्पस में स्व. डॉ. श्री पंधेर साहब के क्वार्टर में ले गये जहाँ परम-पूज्य गुरुजी उन दिनों ठहरते थे। परम-पूज्य गुरुजी के दर्शन कर मैंने दीक्षा हेतु निवेदन किया। परम-पूज्य गुरुजी ने स्वीकृति देते हुए कहा-'वैसे छै बजे मैं मुंगेली के लिये रवाना हो जाता, अब आपको दीक्षा देने के बाद जाऊँगा।' सुनकर मुझे लगा मुझसा धन्य-भागी शायद ही कोई हो क्योंकि सद्‌गुरु ने अपनी यात्रा के समय में परिवर्तन कर मुझ अकिंचन को उपकृत किया। मैं वह आल्हाद का क्षण कभी नहीं भूलता।

दिनांक २४-४-१९८७ को मैं परम-पूज्य गुरुजी के द्वारा दीक्षित हुआ। दीक्षा के बाद तीन दिन नशे की हालत रही। कभी कहीं से खुशबू आती लगे, कभी नींद सताती।

फिर दिन रात परम-पूज्य गुरुजी के पुण्य स्मरण में डूबा रहा। अभ्यास भी धीरे-धीरे जारी था। एक दिन १ दिसम्बर १९९१ संध्या सात बजे अभ्यास के लिये बैठा था तो अचानक गुदा-द्वार से नाभि के सीध में,पीठ में अनुभव हुआ मानो जोरों से हथौड़े की चोट की जा रही हो। सांस रुकी-सी लगी। मैं हड़बड़ा गया। आखों के आगे अंधकार छा गया। यह स्थिति १५-२० सेकंड रही। उसके बाद तेज-तेज सांस चलने लगी और मैं सामान्य होने लगा।

दिनांक १ जून, १९९३ दिन मंगलवार दोपहर करीब ३-४ बजे, दोपहर-भोजन के बाद मैं लेटा तो नींद आ गई। नींद थोड़ी गहरा गई।

दो बार स्वप्न देखा । स्वप्न के बाद दोनों बार आंख खोलने की चेष्टा की, लेकिन असफल रहा। फिर कब नींद और गहरी हो गई, मुझे नहीं मालूम । उस गहरी निन्द्रावस्था में ही मुझे लगा जैसे मेरे शरीर का बायां हिस्सा ऐंठने लगा है। उस ऐंठन के साथ ही बिजली की कड़क यूं सुनाई दी जैसे कहीं गाज गिरने के पहले बादलों में जोरों से लपलपाती चमक के साथ कड़-कड़ की तीक्ष्ण आवाज होती है। ठीक उसी वक्त मुझे ५-१० सेकंड के लिये लगा कि मैं मर गया हूं। ...उसके बाद मेरी सांस जोर-जोर से चलने लगी और नींद खुल गई।

दीक्षा को ६ बरस हो चुके हैं। अपने अन्दर बहुत परिवर्तन पाता हूं। आत्म विश्वास और विपरीत परिस्थितियों को सहने का साहस बढ़ गया है। कई ऐसे मौके आते हैं जहां केवल परम-पूज्य गुरूजी के स्मरण-मात्र से काम बने हैं जबकि उनके बनने की कहीं कोई आशा नहीं दीखती थी, ऐसे प्रसंग अनेक हैं।

दिनांक १९-६-१९९३

रुगनामल तेजवानी
नवापारा-राजिम
पिन - ४९३८८१

※ ※ ※

-0 मैं देवी नहीं थी 0-

दिनांक १९-८-८७

गत रात्रि मैंने एकदम पीला (स्वर्ण रंग) प्रकाश देखा। टार्च से जैसा प्रकाश निकलता है वैसा ही प्रकाश था। इस समय सिर के मध्य भाग में कोई चीज़ ऊपर तरफ ठोकर मार रही है। बहुत दर्द हुआ। इस तरह लगातार दो बार अनुभव हुआ।

दिनांक २०-१९-८७

कुछ दिन पूर्व से प्रातः बेला में लगातार पूज्य गुरुजी के दर्शन हो रहे हैं। एक दिन प्रातः ४ से ५ बजे के मध्य एक दृश्य देखा। एक सुनसान अति रमणीक स्थल है। अति श्वेत संगमरमर की एक बेदी सरीखी चीज पर बहुत ही सुन्दर छत्री बनी हुई है। इस बेदी के पास एक श्वेत वस्त्रधारी पुरुष अकेला बैठा है (किसी आसन पर)। मैं एकाएक इस स्थल पर पहुंचता हूं। अनायास उस बेदी से गुरुजी उठते हैं। दोनों चरण (जैसे पलग पर उठकर बैठते हैं) सामने कर चरणवन्दन हेतु मुझे सम्बोधित करते हैं। मैं दोनों चरणों पर मस्तक को लगा वन्दन करता हूं। असीम तृप्ति, आनन्द, आत्मीयता को एक साथ अनुभव करता हूं। फिर नींद खुल जाती है।

दिनांक ८-१२-८७

आज प्रातः ४३० बजे के बाद प. पू. गुरुजी की बहु कमला को निम्न अनुभूति हुई :-

प पू गुरुजी किसी अपरिचित स्थान पर बैठे हैं। हम सपरिवार उनके पास बैठे हैं। अन्य परिचितजन भी वहां उपस्थित हैं।

गुरुजी अपनी बहू कमला से बातचीत कर रहे थे। एकाएक उन्होंने कहा - मैं जा रहा हूं।

इसी वक्त भय प्रकाश से पूरा क्षेत्र प्रकाशमय हो गया (श्वेत प्रकाश)। उसके भीतर से एक विमान आकाश मार्ग से प्रकाश से भरा उतरते हुए दिखा। उस विमान में लगभग ६ इंच मोटी एवं दो फुट ऊंची जोत (ज्योति) जल रही थी। विमान आते ही गुरुजी उसमें बैठ गये। जैसे गुरुजी हाथ उठाकर आशीष देते हैं वैसे ही आशीष दे रहे थे। उनके बेठने के उपरांत विमान आकाश मार्ग की ओर उठने लगा। काफी दूर तक विमान पर बैठे से आशीष देते दिखाई दे रहे थे। विमान में बैठने पर पूछा – मुंगेली कब आएंगे, तो उन्होंने कहा– हम जा रहे हैं इधर का ख्याल रखना। मेरी समझ में उसने (कमला) अलौकिक चीजें देखी हैं जो उनकी (गुरुजी) भरपूर कृपा का साक्षात प्रमाण है।

दिनांक २३-१-९०

एक कमरे में लगभग ३ फुट की बैठी हुई एक देवी की मूर्ति दिखी। मूर्ति पूर्ण आभूषणों से सज्जित थी। मूर्ति में एकदम अति तेज क्रोध के भाव दिखते हैं। वे अपने गले का हार मोड़कर फेंकती हैं एवम् मेरे समीप बैठे एक रिश्तेदार की छाती पर जोर से लात मारती हैं। मैं शांत भाव से मूर्ति के अति निकट जाकर बैठता हूं। दीक्षा में पूज्य गुरुजी द्वारा प्रदत्त मन्त्र का ध्यान लगा मन में पठन करने लगता हूं। मात्र दो बार मन्त्र के उच्चारण से देवी की मूर्ति "मैं वास्तविक देवी नहीं थी" कहकर अदृष्य हो जाती है।

इस अनुभव का आशय तो पूज्यवर ही बतला सकते हैं, पर पूरा दृश्य बड़ा भयावह था। मैं बहुत सामान्य था। चूंकि गुरुजी की आशीष रूपी छाया सिर पर है इसलिये इस आशीष रूपी कवच से मैं अपने आपको सुरक्षित पाता हूं।

– शांतिलाल जैन
मुंगेली

***

–: ध्यान चरणों का :–

दिनांक १-१०-९२

जैसा कि मैं अक्सर सोने के पहले प. पू. गुरुजी का ध्यान करती हूं, एक दिन अपनी पढ़ाई के बाद ध्यान में बैठ गई और उनके श्री चरणों का ध्यान की (मैं जब भी श्री गुरुजी के पास बैठती हूं, सदा उनके चरण पकड़े रहती हूं) तो मुझे उनके सीधे पैर का अंगूठा, जो एकदम लाल था (कुंकू से) दिखता रहा। कुछ ही मिनटों में मुझे ऐसा लगा कि पूरे मस्तिष्क में पीले रंग का प्रकाश फैल गया है। फिर वह प्रकाश और तीव्र होने लगा तो मैंने घबराकर आंखे खोल दी जिससे मेरी आंखे और भारी हो गई। उसके बाद मैं पुन: ध्यान में बैठ गई तो मुझे फिर वही प्रकाश दिखा तथा मुझे उस देवी का आभास हुआ जिनका श्री गुरुजी ने मुझे मन्त्र (जिसका उच्चारण मैं रोज़ नहाने के बाद करती हूं) दिया है। इसे दर्शन तो नहीं कह सकते शायद काल्पनिक रहा होगा – इस गुत्थी को गुरूजी ही सुलझा सकते हैं।

– आभा शिन्दे
ग्वालियर

☼ अवर्णनीय है ☼

दिनांक २-११-१९९२

विस्तृत आकाश में बहुत तीव्र प्रकाश है। सुन्दर आकाश में सफेद रंग के दुधिया कजरारे-कजरारे बादल हैं। सभी प्रकाशित हैं। नीला आकाश सिर्फ एक स्थान विशेष में ही दिखाई दे रहा है और उस नीले आकाश में अतीव सुन्दर व तीव्र प्रकाश है। आश्चर्य कि वही पर असंख्य तारे हैं। और भी आश्चर्य कि इतने अधिक प्रकाश में भी वे पूर्णत: स्पष्ट चमकते दिखाई दे रहे हैं। इतना सुन्दर और अवर्णनीय है सारा कुछ कि, जैसा देखा वैसा लिख नहीं पा रही हूं। इतना सुन्दर, इतना सुन्दर था सारा कुछ कि वैसा वर्णन नहीं कर पा रही हू।

हर पल गुरुजी का सान्निध्य महसूस करती हूं और ऐसे ही अनेक बार अनुभव हो चुके हैं।

– कुसुम ताम्रकर
पेन्डरा

※ ※ ※

※ "अल्लाह नूर है" ※

दिनांक २८ जनवरी १९९३

मेडिकल कालेज की प्राध्यापिका डा. (श्रीमती) के. के. पंवर के घर में १९८८ से आती जाती रही हूं। उनके निवास पर अक्सर प पू गुरूजी आते रहते थे, जिनके मैं दर्शन कर लिया करती थी। मेरे मन में श्री गुरूजी के प्रति आदर रहता था। एक दिन मैडम ने मुझसे कहा-दीक्षा लोगी ? मैंने मम्मी-पापा से पूछने की बात कही तो उन्होंने कहा मैं भी तुम्हारी मम्मी के समान हूं। तब से मैं उन्हें मौसी जी कहती हूं। एक दिन मैं और मौसीजी गुरूजी के पास गये। दीक्षा की बात हुई तो उन्होंने कहा कि कल (Friday) है, सबेरे दीक्षा दे देंगे। दिनांक ११-८-९० को मैंने गुरूजी से दीक्षा ली। तब से बहुत अनुभव हुए है जिनमें से गुरूजी के आदेशानुसार एक अनुभव यहां दे रही हूं।

दिनांक १४-१२-९२ की घटना है। मैं शाम को ५-३० बजे नमाज पढ़कर उठी ही थी कि मैंने सोचा – आखिर श्री गुरूजी ने ध्यान के लिये क्यों मना किया है? बस यह विचार मन में आते ही मैं बैठ गई कि जब तक यह पता न चले – ध्यान में क्यों नहीं बैठना है. मैं उठूंगा नहीं। अचानक श्री गुरूजी दिखाई दिये। खूब तेज रोशनी थी। इतनी तेज रोशनी सूर्य की भी नहीं होती। इसके बाद मैं कुछ भी करने की स्थिति में नहीं थी। सारा जिस्म सुन्न हो गया था। मेरी रूम पार्टनर (अप्पू-अपर्णा) ने दर-वाजा खटखटाया लेकिन मुझे कुछ सुनाई नहीं दिया। करीब १५ मिनट के बाद श्री गुरूजी गए। इसी हालत में मैंने श्री गुरूजी से बातें भी की, लेकिन वे सब भूल गई। बस, इतना याद रहा कि श्री गुरूजी मुझे मार्गदर्शन देते रहे – "अभी तुम्हें पढ़ना है, Post Graduation करना है इसमें करीब दो वर्ष का समय लग जायेगा, उसके बाद अभ्यास करना।

इसके बाद स्थिति सामान्य होने पर मैंने उठकर दरवाजा खोला। करीब दस दिन तक मुझे खूब ठंड और पसीना आता रहा। कभी ठंड महसूस होती थी तो कभी गरमी। सारा शरीर

कांपता था। एक दिन इस स्थिति से गुरूबंधु श्री मनोहर भैया को अवगत कराई। उन्होंने सलाह दी कि मैं नमाज का समय कर दूं। वैसा रहने पर मैं फिर सामान्य रहने लगी। इसके बाद यही बात श्री मनोहर भैया ने प पू गुरूजी को बताई। श्री गुरूजी ने मनोहर भैया के माध्यम से निर्देश भेजे कि मैं नमाज पढ़ना बिलकुल बंद कर दूं। इस प्रकार श्री गुरूजी के मार्गदर्शन का अनुसरण कर आज आनन्द महसूस कर रही हूं। इस अनुभव से यह बोध हुआ कि "अल्लाह नूर है"। प पू गुरूजी की आशीष बनी रहे, यही इच्छा है।

दिनांक २९ जनवरी, १९९३

प पू. गुरूजी की तस्वीर मैंने अपने Album में लगा रखी है, वह एल्बम बुरहानपुर में मेरी मम्मी के पास है। एक दिन की घटना है मेरी मौसीजी का अस्सी हजार का "इन्दिरा विकास पत्र" कहीं गुम हो गया। मौसीजी ने वह विकास पत्र मम्मी के पास रखा था जो मिल नहीं रहा था। सारा घर दो तीन बार खोज लिए लेकिन नहीं मिला। घर के सब लोग बहुत परेशान थे। एक दिन मम्मी दराज साफ कर रही थी। उस दराज में उन्हें मेरा एल्बम मिला, जिसमें प पू गुरूजी की तस्वीर रखी हुई है। मम्मी ने एल्बम खोला और नीचे फर्श पर बैठ गई। वे पूज्य गुरूजी की तस्वीर को देखने लगीं। उस तस्वीर में उन्हें दिखाई दिया कि वह विकास पत्र रजाइयों वाली अलमारी में कागज के नीचे रखा है। तुरंत मम्मी ने उठकर अलमारी खोली और रजाइयां हटाई। वहां उन्हें कागज के नीचे वह पत्र मिल गया।

इस घटना को उन्होंने मुझे फोन पर बताई। प पू. गुरूजी का आशीष सदा बना रहे यही वे चाहती हैं। उनका नाम है "फरहत"। स्थाई पता – हबीब गार्डन, मण्डी बाजार, बुरहानपुर (म. प्र) पिन – ४५०३३१

– डा. (कु.) हनीफा तालिब
गर्ल्स हास्टल, मेडीकल कालेज
रायपुर (म प्र) ४९२००१
फोन – ५.५६२२

※ प्रकाश का गोला ※

दिनांक ३०–३–१९९३

परम पूज्य गुरूजी से दीक्षा के पश्चात् मुझे अनेक अनुभव हुए हैं। बहुत ही अच्छा लगता है। एक आनन्ददायी अनुभव यहाँ दे रही हूं-

दिनांक ३–३–९३ को दोपहर १२ बजे के लगभग मैं बिस्तर पर लेटी, आंख बन्द किये, दोनों भौहों के बीच देख रही थी। अचानक एक प्रकाश का बड़ा गोला, सुनहरे रंग का चमकता हुआ तेजी से घूम रहा था, उसके साथ-साथ घण्टे की आवाज एवं ओम् की ध्वनि सुनाई दे रही थी जो तेज होने के कारण असहनीय थी। मैं उस प्रकाश के गोले को देख रही थी। प्रकाश का गोला तेजी से घूमते हुए अचानक गायब हो गया। ध्वनि बंद हो गई। मुझे ऐसा लगा मेरे पास आकर क्या चला गया, एकदम शांति। तभी प्रकाश की जगह मैं (आपकी) अपने गुरूजी की आरती कर रही हूं। आरती घुमाते हुए बार बार मंत्रोच्चारण कर रही हूं और फिर मैंने आंख खोल दी।

– कु. अलका मिश्रा
C/o. श्री गोविन्दलाल मिश्रा
पुरानी बस्ती, लिली चौक
म. नं ३९/६७५
रायपुर (म. प्र.)

※ कभी नही भूल सकता ※

दिनांक १३-४-९३

प पू गुरुजी के आशीर्वाद से मुझे लाभ है तथा समस्याओं का निराकरण हो रहा है। मुझे पूज्य गुरुजी के दर्शन रोज हो जाते है। मैं उनकी इस कृपा को कभी नहीं भूल सकता।

एस. एन. टण्डन
००१/ए-५ व्ही-शांतिनगर, मीरा रोड
बम्बई

※ ※

'योगियों पर तंत्र-मंत्र नहीं चलता'

दिनांक १-६-१९९३

हमारे जीवन में कुशल मार्गदर्शक का महत्व बहुत अधिक है। किसी भी महान व्यक्ति के जीवन को, यदि हम देखेंगे तो उसके पीछे किसी योग्य मार्गदर्शक का प्रभाव देखने को मिलेगा। स्वामी विवेकानन्द के जीवन में उनके गुरु रामकृष्ण परमहंस का ही प्रभाव था।

सर्वप्रथम मैंने दिसम्बर १९८३ में श्री सत्गुरूजी की जीवनी "दिव्याम्बु निमज्जन" पढ़ी तो लगा कि आज के इस युग में भी महान योगी विद्यमान हैं। मुझे अपने जीवन के कल्याण हेतु उनकी शरण में जाकर मार्गदर्शन लेना चाहिए। एक दिन स्वप्न में ही किसी पहाड़ी के पास श्री सत् गुरूदेव (जो सफेद वस्त्र पहने थे) मिले, उन्होंने मुझे अपनाया और आशीर्वाद दिया।

१५ दिसंबर १९८३ को गुरूजी इंदौर श्री भटजोवाले साहब के घर आए थे। उनके साक्षात दर्शन हुए। हमने दीक्षा के लिए निवेदन किया तो उन्होंने पूछा-क्या मरने के लिए तैयार हो ? हमने हां कहा। श्री सत्गुरु के मार्गदर्शन में मौत हो यही तो जीवन का सार है। गुरूजी ने कहा-समय आने पर वे हमें दीक्षा देंगे। १५ दिन तक मैं परेशान रहा, मन में विचार आने लगे कि मुझमें क्या दोष है, गुरूजी मुझे क्यों नहीं अपना रहे हैं। एक दिन बहुत रोना भी आया। अन्ततः दिनांक १-१-१९८४ को सत्गुरूजी ने कहा-२ तारीख सोमवार को सुबह दीक्षा के लिए आ जाना। मेरी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। दिनांक २-१-८४ सोमवार को गुरूजी ने मुझे साधना का अतिविशिष्ट तरीका बताया और मुझे लगभग दस मिनट ध्यान कराया। ध्यान में सर्वप्रथम महसूस किया-धुंधला सा चन्द्रमा जैसा प्रकाश, जो बाद में चमकीला बिन्दु हो गया। फिर ओम् और सत्गुरूजी आशीर्वाद देते हुए दिखाई दे दिये। उस दिन गुरूजी ने बताया कि

मेरी किस्मत का दरवाजा आज खुल गया है। अब कोई इसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

दीक्षा लेने के पहले हम बहुत संकट में थे। एक तांत्रिक के चक्कर में आ गए थे। हमारी कमजोर आर्थिक स्थिति में श्रीमती जी की तबियत खराब रहती थी। दो बार एबारशन हो जाने से एक पड़ोसी के कहने पर तांत्रिक से संपर्क हुआ था। श्रीमती जी की तबियत तो ठीक हो गई पर तांत्रिक महोदय ने हम पर वशीकरण शुरू किया। हमारी मोटर सायकल हमसे ज्यादा वे उपयोग करने लगे। आर्थिक मदद भी उनको देनी पड़ती थी। एक दिन हमने उन्हें मोटर साइ-किल देने से मना किया तो वे नाराज हो गये। हमें भी डर लगा। शाम को फेक्ट्री से आते समय हमने भांग की एक गोली (मुनक्का) खा ली थी। घर आने पर वह बहुत चढ़ गई। नशे में हवाई जहाज की तरह जोर से सिर में आवाज आती और वह तांत्रिक दिखता व कहता हमसे दुश्मनी करोगे? हमने सोचा आज वे हमसे नाराज हो गये हैं, उनके ही कारण हमारी दुर्दशा हो रही है। जन्म से लेकर उस दिन तक की सारी घटनाक्रम हमारे मस्तिष्क में घूमा और फिर तांत्रिक ने हमें मार डाला। हम सभी देवी देव-ताओं से "जिनकी पूजा करते उनसे बचाने की प्रार्थना करते रहे पर उनमें से किसी ने भी हमारी पुकार नहीं सुनी। भांग के नशे में हमारे अनेक जन्म हुए। घटनाक्रम आए और हम मर गए। इस तरह १०-१२ बार हुआ, बाद में क्या हुआ पता नहीं। श्रीमती जी घबरा गई थी, सुबह उठने पर उसने बताया कि रात में पागल जैसे क्यों हो गये थे आगे कभी उस तांत्रिक को नाराज मत करना। परतु हमने तो उससे पीछा छुड़ाने की ठान ली थी। हम सत्गुरु की खोज में थे और हमें समर्थ सत्गुरू मिल गये हमारे परम मित्र संजीव भटर्जी ढाले के मार्फत।

दीक्षा के बाद एक दिन फिर मौत का अनुभव हुआ। मैं ध्यान करने के बाद शवासन में था तो मेरे प्राण निकलकर बाहर आ गये। कुछ समय के बाद जब वापस शरीर में प्रवेश करने लगे तो प्रवेश नहीं हो पा रहा था। मुझे अत्यन्त कष्ट हो रहा था। मैंने उसी क्षण सत् गुरूजी का स्मरण किया तो एकदम से सामान्य (तन्दुरुस्त) हो गया। प्राण अपने स्थान पर आ गया। तब अनुभव हुआ कि पहले हम १-१ घटे देवी-देवताओं की पूजा करते थे पर संकट के समय किसी ने मदद नहीं की। अब गुरूजी संकट के समय हमारे साथ हैं।

श्री सत्गुरूजी ने हमें उस तांत्रिक की चपेट से बचाया। श्रीमती जी कुछ समय तक तो उसके प्रभाव में रही पर अब वो भी मुक्त हो गई है। जैसा कि गुरूजी ने कहा था हम योगियों पर किसी का मन्त्र-तन्त्र नहीं चलता है इस लए वो हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सका।

श्री सद्गुरू के सानिध्य में आने के बाद हमें धर्म का वास्तविक स्वरुप समझ में आया। उसके पहले तो धर्म के नाम पर हम बहुत भ्रमित थे। दीक्षा के बाद हमारे दैनन्दिक कार्य मे भी बहुत सुझ बूझ मिली। दवाई की फेक्ट्री मे जहां हम काम करते थे वहां अनेक प्रकार की समस्याएं थी। जब हम उन समस्याओं का समाधान खोजने लगे तो श्री सद्गुरू कृपा से हमें अच्छे-अच्छे अनु-कूल विचार आए, जिससे हमने दवाई बनाने की विधि में परिवर्तन करके देखा तो उससे दवाई की

क्वालिटी ठीक हुई। इसके अलावा उसकी मात्रा में भी १० प्रतिशत की वृद्धि हो गई। इस तरह कम्पनी को बहुत लाभ हुआ। उसने हमें ईनाम एवं प्रशस्ति-पत्र भी दिया। इस तरह अनुसंधान के क्षेत्र में हमारा मनोबल (आत्म विश्वास) बढ़ा।

एक बार हमने गुरुजी से कहा- हमें बड़ी कम्पनी में काम करना है। गुरुजी ने कहा- छः माह रुको। ठीक छ: माह बाद बड़ी कम्पनी लुपिन लेब में एपाइन्टमेन्ट हो गया। यहां पर भी अनेक उपलब्धियां सद्गुरु कृपा से मिली। व सद्गुरु के नाम से कई बिगड़े काम बन गए हैं। एक बार बिगड़ी हुई मशीन को श्री गुरुजी का नाम लेकर चालू किया तो चालू हो गई। गुरुजी कहते हैं- वे हमारी तरक्की देखना चाहते हैं। उनकी आशीष सर्दव हमारे साथ है।

३ वर्ष पूर्व मैं औरंगाबाद में था। वहां बहुत ध्यान करता था। नशा बना रहता था। एक बार वहां श्री सत्गुरुजी, श्री वसन्तराव जुंबड़े साहब के साथ हमारे घर आए। मुझे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि हमारे घर आराध्य देव आए हैं। व हमारे निवेदन करने पर औरंगाबाद के वे सभी स्थान दिखाए जहां गुरुजी ने अभ्यास किया था। श्री काशीराम जी महाराज एवं श्री जगमोहन दास मेहनाजी, जो गुरुजी के सामने पहले १०-१२ वर्ष के थे अब ६०-६५ वर्ष के हैं उन्होंने गुरुजी को पहचान लिया। श्री गुरुजी के साथ हम पेश इमाम साहब की दरबार पर, श्री एकनाथ महा-राज की समाधि स्थल पैठन, श्री संत ज्ञानेश्वर महाराज का समाधि स्थल आलदी, और सतारा के पास स्वामी रामदास का समाधि स्थल सज्जन-गढ़ भी गए। गुरुजी ने इन सभी स्थानों के सबंध में अनुभव सुनाया। औरंगाबाद में गुरुजी के साथ एक वीडियो फिल्म भी याददाश्त स्वरूप निकाली।

एक बार जब गुरुजी से हमने अधिक ध्यान हेतु अनुमति चाही तो उन्होंने कहा ज्यादा मत डूबो तुम सांसारिक काम करते हुए शनैः शनैः आगे बढ़ो। जितना ध्यान करते हो उसे पचाते जाओ। अधिक आंतरिक नशा बाह्य जगत के लिए ठीक नहीं है इसलिए धीरे धीरे ही बढ़ना अच्छा है। सत्गुरुदेव जी जाने।

हमारे घर में श्री सत्गुरुदेव का पूजन सभी करते हैं। मेरे पिताजी सर्दव जन्मोत्सव पर्व पर जाते हैं। उनकी गुरुजी पर बहुत श्रद्धा है। उनके स्वास्थ्य में बहुत लाभ हुआ है। हमें सद्गुरु कृपा से पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई है। आर्थिक स्थिति में भी बहुत प्रगति हुई है। सबसे अधिक तो आत्म विश्वास में काफी वृद्धि हुई है। अब किसी से अकारण भय नहीं होता है। सत्य के पथ पर बाधायें पार करने की हिम्मत आ गई है और क्या चाहिए। हमनें सद्गुरु की शरण में आने के बाद क्या नहीं पाया है ? सब कुछ पाया है।

श्री सदगुरुदेव की सेवा में मुझे सर्वाधिक आनंद अनुभव होता है। उनके दर्शन, ध्यान एवं वचन सुनने में भी बहुत आनंद आता है। एक नशा सा बना रहता है याद करने पर मस्तिष्क में आनंद की लहर गुरुजी की याद दिलाती रहती हैं। अपने गुरु बन्धुओं की तरह मैंने भी गुरु जी के साथ यह अनुभव किया है कि उन्हें सब मालूम होता है। कभी कोई प्रश्न करने के लिए उनके पास जाते हैं तो प्रश्न के पहले ही उत्तर मिलना चालू हो जाता है और गुरुजी बहुत दूर से भी हमें अपने पास अनुभव होते हैं। इसके अलावा भी कई छोटे बड़े अनुभव आए है पर सभी को यहां लिख पाना संभव नहीं है। ये अनुभव तो, अनुभव करने की चीज हैं पढ़ने या लिखने की नहीं।

हम अपने सदगुरु जी से यही प्रार्थना करते हैं कि वे सर्दव हम सभी गुरुपरिवारजनों पर आशीष बनाए रखें और मार्गदर्शन करते रहें। सद्गुरुदेव का स्वास्थ्य सर्दव उत्तम रहे। हम सभी के वे पिता से बढ़कर परमपिता हैं। हम पर उनका स्नेह एवं आशीष सदैव-सदैव जन्म-जन्मान्तर तक बना रहे और सत्कर्म के लिए सूझ-बूझ मिलती रहे।

— डूंगरलाल शर्मा
३४७, जनता कालोनी, स्टेडियम ग्राउंड
नन्दा नगर, इन्दौर

एक अनुभव-दीक्षा के पूर्व

दिनांक १-५-९३

सद्गुरू के चरणों में शत्-शत् नमन के साथ मैं अपना अनुभव आपके सामने रख रही हूँ-

श्री मोहनसिंह ठाकुर भैया से सद्गुरू का पता चला तो हम लोग उद्बोधन में छपी सद्गुरू जी की फोटो को सामने रख उनकी पूजा और ध्यान करने लगे। सद्गुरू से मन ही मन प्रार्थना की कि जिस तरह एकलव्य को ज्ञान मिला उसी तरह आप मुझे भी आत्म-ज्योति के दर्शन कराइये। सद्गुरू की कृपा से उनके साक्षात् दर्शन हुए और दीक्षा के पूर्व २०-२१ दिन में ही ध्यान में तेज प्रकाश, सूर्य, चन्द्रमा के दर्शन होने लगे। एक बार तो ऐसा लगा कि आग का एक तेज गोला इतने पास आ गया कि चेहरे पर उसकी तपन महसूस होने लगी।

दिनांक १२-५-९१ को गुरू चरणों में शरण पाने की तीव्र इच्छा के साथ मुंगेली पहुचे। सद्गुरू के दर्शन से अनोखी आत्मिक शांति मिली। सद्गुरू को अनुभव बताई तो उनके मुख से निकला-'बस अब क्या है तुम तो तर गई।' बाद में दिनांक ४-६-९१ को डॉ. आचार्य के निवास पर दीक्षा हुई।

दीक्षा के बाद उठते, बैठते, काम करते सद्गुरू के ध्यान में रहने लगी। सोने के लिए आंख बंद करते ही भौंहों के मध्य तेज प्रकाश चमकने लगता, कभी-कभी प्रकाश इतना तीव्र हो जाता कि आंख बंद करना मुश्किल होता था। एक बार ध्यान के समय दोनों भौंहों के मध्य ज्योति में तेज धुआं उठता सा लगा, ऐसा लगा कि धुआं भौंहों के मध्य से बाहर निकल रहा है। एक बार सर्प दिखा। मेरे ध्यान का समय बढ़ने लगा। एक बार नाभी के नीचे व जांघ में थिरकन हुई, मैं घबराकर ध्यान से उठ गई। कई बार ध्यान में सद्गुरू के दर्शन हुए। कभी-कभी सिर्फ उनके चरणों के दर्शन होते रहे।

फरवरी, ९३ में जब सद्गुरू जी रायपुर आए तो उनके आदेश से ध्यान का समय कम कर दिया। आज भी ध्यान में बैठते ही एक छोटा-सा बिन्दु तुरन्त भौंहों के मध्य आ जाता है। सद्गुरू की कृपा से हर समय मन उनके चरणों में लगा रहता है और उनकी कृपा का पात्र अपने को मानकर मन प्रफुलित रहता है। उनकी कृपा से कई कठिन काम भी सरलता से पूरे हुए हैं। सद्गुरू की कृपा सदैव मेरे पविवार पर बनी रहे, यही कामना है।

❋
❋

- श्रीमती शांती देवी शर्मा

पहाड़ीपारा, गुढ़ियारी

रायपुर (म. प्र.)

-0 एक साधे सब सधे 0-

सन् ८० में मैं श्री परम पूज्य महायोगी सद्गुरूजी से दीक्षा ली थी। सन् ८२ दीवाली में मेरे पतिदेव ने दुकान में प्रथम श्री सद्गुरुजी की पूजा किये, पश्चात् लक्ष्मी पूजा।

मुझे अच्छा नहीं लग रहा था तो अपने कमरे में जाकर लेट गई। ३ बार मेरे माथे में किसी ने हाथ से स्पर्श किया। मैं एकदम हिम्मत करके उठी क्योंकि बहुत डर गई थी। चोर-चोर चिल्लाने लगी। कमरे की लाईट जलाई, पलंग के नीचे देखो। कमरे में कोई नहीं।

मैं अपने पतिदेव प्रकाशचन्द्र पारेख जो पूज्यनीय श्री सद्गुरुजी के शिष्य हैं को बताई। उन्होंने श्री पूज्यनीय गुरूजी को मेरा अनुभव लिखा। उस दिन मुझे श्री पू. सद्गुरूजी ने समाधी स्थित प्रदान किये।

वे स्वयं ही आकर मेरे माथे में हाथ रखे थे। श्री पू गुरूजी कहे - अब तुम दोनो बराबर हो गये।

मुझे एवं मेरे पतिदेव को रात्रि में छत में चन्द्रमा की तरह प्रकाश भी देखा।

मैं भयानक बीमारी से ग्रस्त हो गई थी। श्री पू. सद्गुरूजी के आशीष एवं दवाई से अब स्वस्थ हूं। एक साधे सब सधे। सब साधे सब जाये। हमारे चारों बच्चे भी दीक्षित हैं।

– श्रीमती शांती पारेख
(पत्नी - प्रकाशचन्द्र पारेख)
मुंगेली

※ ※ ※

-:- मैं खत्म हो गई हूं -:-

मैंने १८ मार्च सन १९८२ को अपने मामाजी (डॉ. भानु गुप्ता) एवं मामीजी द्वारा परम पूज्य गुरूजी से दीक्षा प्राप्त की। दीक्षा के उपरांत मुझे ध्यान में मुझे पूज्य गुरूजी के चरण एवं दोनों हाथ आशीर्वाद देते हुए दर्शन दिए एव कभी-कभी ऐसा लगता कि शरीर ऊपर उठ रहा है। सन् १९८७ को दूसरी दीवाली के दिन मैंने रात में पटाखे चलाये उसके उपरान्त मैं सोने के लिये गई। मुझे दो घन्टे तक नींद नहीं आई। मेरा पूरा शरीर शून्य हो गया और हाथ व पैर ठंडे पड़ गये। मैं उठकर मां के पास आयी और उनको बताया फिर मैं अपने पूज्य मामाजी (डॉ. भानू गुप्ता) के यहां जाने के लिये बोली। मेरे भैया मामाजी के यहां गये। करीब १२ बजे रात को उन्हें बताया। मामाजी आये और बोले कुछ नहीं होगा। ठीक हो जायेगा। मेरे सांस की गति बहुत धीमी पड़ गई थी। करीब दो घंटे मामाजी बैठे रहे व भैया और मां मेरे हाथ पैर घिसते रहे उसके बाद मुझे ठीक लगने लगा। दूसरे दिन मैंने पूज्य गुरूजी को बताया। गुरूजी

ने बताया अभी अभ्यास बन्द कर दो। पढ़ाई करो। करीब दो महीने बाद एक दिन मेरा सिर बहुत भारी या कुछ उसमें चल रहा है। ऐसा प्रतीत होने लगा। इसी दौरान एक दिन रात में मुझे पूज्य गुरुजी के तीन बार दर्शन हुए। पूज्य गुरूजी श्वेत प्रकाश में थे। एक दिन दोपहर में मैंने पीला प्रकाश देखा। उस प्रकाश के बाद मुझे पूज्यनीया मामीजी (चन्द्रकांता गुप्ता धर्मपत्नि डॉ. भानू गुप्ता) भी दिखाई दीं। एक दिन मेरा शरीर ऊपर उठ रहा है लगा व एक कुंआ है जिसमें श्वेत प्रकाश है परन्तु उसमें जाने में थोड़ा डर लगा। पूज्य गुरुजी को मैंने याद किया और मैं उसमें नही गई। इन सभी अनुभवों के दौरान मेरा सिर कम ज्यादा होता रहा। मैं अपने पूज्य मामाजी के यहां जाती रही व मामा जी मुझे रोज समझाते रहे। एक दिन मैं मामाजी के निवास स्थान पर लेटी हुई थी। मुझे ऐसा लगा मैं खत्म हो गई हूं। ऐसा दो बार हुआ। मैंने पूज्य गुरूजी को याद किया और वापस आ गई। इसके उपरांत दिनांक १९-२-८८ को मैं सोई थी। फिर मुझे ऐसा लगा मेरे शरीर से एक सूक्ष्म शरीर निकल रहा है। मैंने पूज्य गुरुजी को याद किया फिर ठीक होने लगा। मैंने इसे भी पूज्य गुरुजी को बताया। पूज्य गुरूजी ने मुझे अनुभव लिखकर देने को कहा। अब हम सपरिवार परमपूज्य गुरूजी की कृपा एवं आशीर्वाद से आनन्दित है।

– कु. अंजुषा दीवान
(सुपुत्री श्री अरूणकुमार दीवान)
एडव्होकेट, मुंगेली (म. प्र.)

※ कोई दस्तक दे रहा है ※

॥ ॐ ॥

प. पू. गुरूजी की सेवा में,

मेरा अनुभव,

आक्टोबर १९८४ मेरा पुत्र चि. दीपक उम्र ९ साल को नाभी पर कुछ फफोले दिखाई दिये। दो दिन में फफोले नाभी के आसपास फैल गये। तुरन्त डाक्टर को दिखाया। डाक्टर ने कहा कि यह तो हरपीस है। यह सारे पेट और छाती पर फैल सकता है। इसमें भयंकर जलन होती है। यह रोग जल्दी ठीक होने वाला भी नहीं होता। मैं एकदम चिन्ता में पड़ गई कि एक छोटा सा बच्चा यह भयंकर बीमारी कैसे सह सकता है। उसी दिन रात को सोते समय प. पू. गुरूजी को स्मरण किया और गुरूजी को ही कहा आपको ही चि दीपक को संभालना है। उसी रात सुबह ४ बजे के करीब दरवाजे पर दस्तक देने की आवाज सुनाई दी। मैंने नीद में ही कहा देखो तो दरवाजे पर कोई दस्तक दे रहा है। ऐसा दो तीन बार हुआ। कोई नहीं उठा देखकर मैंने सोते हुए ही दरवाजा खोला तो क्या देखती हूं प्रत्यक्ष गुरूजी श्वेत वस्त्र पहने हुए दरवाजे पर खड़े हैं। मैंने गुरूजी के चरण स्पर्श किये। गुरूजी ने अन्दर प्रवेश किया और चि. दीपक के पास बैठ गये, दीपक के सारे शरीर पर हाथ फेर दिया। उसी समय मेरी नींद खुल गई। तीन दिन में ही दीपक के फफोले सूख गये। इस प्रकार हरपीस एकदम ठीक हो गया। डॉ. को दिखाया, डॉ. ने भी आश्चर्य व्यक्त किया और कहा यह तो कोई चमत्कार ही हुआ है। वास्तव में, यह चमत्कार ही था। यह सद्गुरु की असीम कृपा का ही परिणाम है।

– सौ. उमा खोत
पत्नि बसंतराव खोत, ग्वालियर

एक अनुभव

सन् १९८५ में श्रद्धेय ज्ञानशंकर जी शुक्ल की प्रेरणा से मैं गुरू पूर्णिमा महोत्सव रायपुर में सम्मिलित हुआ। पूजनीय गुरूजी के दैदीप्यमान रूप एवं आदरणीय शिष्यों के अनुभव, प्रेरक विचार तथा उनके समर्पण सेवा भाव से मैं अत्यंत अभिभूत हुआ। तत्पश्चात पूज्य गुरूजी के मुंगेली प्रवास में मैंने दो बार दीक्षा लेने का प्रयास किया, किन्तु असफल रहा। वैसे मैंने सुन रखा था कि वे उपयुक्त समय पर ही दीक्षा देते हैं, किन्तु मैं भी एकलव्य सदृश्य निश्चय कर चुका था। संभवत: इसीलिये ही तृतीय प्रवास में पूज्य गुरूजी ने मुझे दीक्षा दी। मैं उनके दिये गये दिशा निर्देशों के अनुसार ध्यान मार्ग पर बढ़ता गया।

कुछ माह बाद एक रात्रि मैंने ध्यान में देखा कि मेरी पुत्री के विवाह हेतु बारात मेरे गांव आई हुई थी। (जबकि मेरी लड़की अत्यंत ही अल्पायु थी) । मुझे समधी महोदय की ओर से यह आदेश मिला कि मैं दो बड़े दीपक हाथ में उठाए हुए, दौड़ते हुए जनवासा पहुंचू। आदेशानुसार दो दीपक दोनों, हाथों में उठाये हुए घर से बाहर निकला। सहसा तेज धूलभरी प्रचण्ड हवा चलने लगी। एक वधु के बाप की मनोदशा का आप आसानी से अनुमान लगा सकते हैं। कुछ सौ मीटरों की दूरी मानो मीलों में बदल गई। ये मेरे जीवन की बिकटतम स्थिति थी। मैं अत्यंत परेशान, तनावग्रस्त दौड़ता गया। भय यह था कि कहीं ये दीपक बुझ गये तो बारात वापस लौट जावेगी और पुत्री का जीवन तथा मेरी पारिवारिक, सामाजिक स्थिति यंत्रणामय व नारकीय हो जायेगी।

अंतत: मैं गिरता पड़ता, हांफता, थका हुआ जनवासा पहुंच कर उनके चरणों पर गिर पड़ा किन्तु मेरे दोनों हाथ जलते दीपक उठाये हुए थे। थोड़ी ही देर बाद मैंने आंखें ऊपर उठाई, मैंने पाया कि एक श्रीमंत गहरे कत्थई रंग के बहुत ही सुन्दर सफारी सूट धारण किये मेरी ओर मधुर, सम्मोहक मुस्कान से देख रहे थे। भव्य, दिव्य, क्षमाशील मुस्कुराहट वाले वे भद्रजन कोई और नहीं वरन् वे नित्य-स्मरणीय पूज्य गुरूजी ही थे। सच माने मुझे ऐसा लगा जैसे दुख,तनाव, चिन्ता के महा-मरूस्थल से निकलकर आनन्दमय महासागर में गोते लगा रहा हूं। इस स्वप्न की व्याख्या तो पूज्य गुरूजी ही कर सकते हैं। यह योगानुभव परम श्रद्धेय गुरुजी के चरण कमल में सादर समर्पित हैं।

– देवहरण लाल तिवारी
ग्राम–सूरीघाट
पोस्ट–मुंगेली
जिला बिलासपुर (म.प्र.)
पिन –४९५३३४

❋ ❋ ❋

मनुष्यों ने मार्ग निकाला, जिसे योग कहा। आत्मयोग कहा, राजयोग कहा, राजविद्या कहा। पवित्र कहा। "पवित्रं इदम् उत्तमम्।" इससे उत्तम और कोई पवित्र करने वाला मार्ग ही नहीं है, पद्धति नहीं है, विद्या ही नहीं है। इसी जीवन में होता है। आप प्रत्यक्ष कर सकते हैं। आपको बोध हो सकता है।

❋ ❋ ❋

☆ अनेक जन्मों में ज्ञानी पहचान पाता है ☆

ॐ

सर्व वेदान्त सिद्धांत, गोचरं तमगोचरम् ।
श्री वासुदेवं परमानन्दं, सद्गुरू प्रणतोऽश्चाम्यहम् ॥

मैंने परम पूज्य गूरूदेव से योग की दीक्षा २२ जुलाई सन् १९८७ में ग्रहण की। तत्पश्चात् उनकी कृपा से निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा हूं। इस प्रगति का वर्णन करने में मैं, अपने आपको असमर्थ प्रतीत करता हूं। नित्य नई अनुभूतियों के मध्य से कुछ का उल्लेख मैं यहां कर रहा हूं। विद्या दो प्रकार की होती है। एक अपरा विद्या और दूसरी परा।

१- अपरा विद्या:-वह विद्या है जो शास्त्रीय ज्ञान से अर्जित होती है।

२- परा विद्या:-वह विद्या है जो विवेकज होती है।

अपरा विद्या के ज्ञाताओं का अभाव नहीं है। किन्तु परा विद्या के ज्ञाता का मिलना बहुत कठिन है। अनुमान मानियों की कमी नहीं है, लेकिन उन अनुमान मानियों के माध्यम से विवेकज ज्ञान का मार्गदर्शन नहीं प्राप्त किया जा सकता है।

हमारे परम पूज्य गुरूजी परा विद्या के परमोत्कर्ष पर पहुचे हुये हैं। इसकी अनुभूति मुझे है। गीता में श्रीकृष्ण ने अपने शिष्य अर्जुन से कहा है:-बहूनाजन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते। अर्थात् अनेक जन्मों के अन्त में ज्ञानी मुझे पहचान पाता है। अतः मेरे भी अनेक जन्मों का पुण्यकर्मो का संस्कार था कि मैं गुरूजी को अपनी क्षमता की अपेक्षा उनकी कृपा से पहचान पाया एवं उनकी शरण में आ गया हूं। इसमें मेरी अपनी कोई क्षमता नहीं है वरन् उनकी कृपा परम् है। गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है:-

नहं प्रकाश: सर्वस्य योगमाया समावृत: ।
मूढोऽयं नामिजानाति लोकोमामजमव्ययम् ॥

अत: योगमायान्तर्गत योगियों को पहचानना उनकी ही परम् कृपा पर निर्भर है और यह कृपा उनकी मेरे एवं सभी शिष्यों पर है. जो उनके मार्गदर्शन पर आरूढ़ हैं। वे सभी शिष्यों या यों कहिये कि अपने परिवार के सदस्यों को समय-समय पर अपने शब्दों से भी उनकी प्रगति एवं कमजोरियों की ओर इंगित करते रहते हैं, जो इन शब्दों पर ध्यान देता है, वह समझता है एवं उनका पालन करता है। इसका एक उदाहरण मेरी एक अनुभूति है। आज से लगभग तीन वर्ष पूर्व मेरा भांजा यहां (दुर्ग) प्रथम बार आया। वह ज्वर से पीड़ित हो गया। वह ज्वर टायफायड था। औषधि चल रही थी। उसी बीच एक दिन सायंकाल उसकी अवस्था कुछ अधिक नाजुक थी। मेरी पत्नी अत्यधिक चिन्तित थी मैंने ध्यानावस्था में मन में गुरुजी से प्रार्थना की, कि यदि मैं ब्रम्ह हूं, यदि मैं आत्मा हूं, यदि मैं परमात्मा हूं, यदि मैं गुरूजी हूं, तो मेरे भांजे का ज्वर तीन घण्टे में समाप्त हो जाना चाहिये।' उसका ज्वर डेढ़ घटे

में ही समाप्त हो गया और फिर नहीं चढ़ा। किन्तु परम पूज्य गुरुजी से जब मैं प्रत्यक्ष हुआ तो उन्होंने प्रकारान्तर से यह बतलाया कि हम सब हो सकते हैं किन्तु ब्रम्ह नहीं हो सकते हैं। अत: मैंने ईश्वर की परिभाषा को जान लिया अन्वेषण करके एवं अपने एवं उनके अन्तर को भी जाना।

सन् १९९१ के २३ जुलाई की बात है। वर्धा में गुरु दिवस मनाया गया। गुरु पूजन के अवसर पर जब पूजन का कार्य समाप्त हुआ और गुरुजी अपने आसन पर लेटे हुये थे। वे बहुत थके हुये थे। लोग उनके चरण स्पर्श के लिये जाते थे। गुरुजी उन्हें आदेश देते थे कि वे उन्हें दूर से ही नमस्कार करें। किन्तु लोग अपने को रोक नहीं पाते थे। मैंने उन्हें अपने नयनों से इन चर्म चक्षुओं से युगल चरणों पर प्रणाम किया एवं एक सर्चलाईट का प्रकाश मेरे नयनों में आना प्रारंभ हो गया। मेरा निवास उसी धर्मशाला में था। अत: अपने आपको किसी प्रकार कक्षा तक ले गया तथा लगभग एक घण्टा तक बेसुध एवं मस्ती में रहा।

अब तीसरी घटना २४ जुलाई १९९२ की बतलाता हूं। ग्वालियर में २३ जुलाई को गुरू पूजन हुआ। २४ जुलाई को सामूहिक ध्यान था। श्रीराम पैलेश में सब एकत्र थे। गुरूजी अपनी अस्वस्थतावश नहीं आये। मेरे अन्दर यह भाव आया कि आज ऐसी घड़ी आ गई कि गुरुजी सशरीर नहीं आ सके। अत: गला अवरूद्ध हो गया एवं अश्रुपात होने लगा। आंखें बन्द थी। मैंने गुरुजी को आकाश में प्रकाश पुंज में अनेक रूपों में ऊपर उड़ते देखा। जब उनके आदेश से मुझे अपनी अनुभूति व्यक्त करने का आदेश मिला, तो मैं अपने मित्र श्री ओंकारनाथ पाण्डेय से पूछने लगा कि मुझे किस विषय पर बोलना चाहिये। उसी समय मेरे नयन बंद हो गये और मैं एक ही रूप में हजारों गुरुजी को देखा। मेरी स्थिति कुछ और ही हो गयी। मेरे पग डगमगाने लगे। मंच पर मैं किसी प्रकार पहुंचा एवं गुरुजी के आदेश का पालन किया। अन्त में मैं यह कहता हूं कि गुरुजी अपने नाम के गुणों से पूर्ण हैं। वह इस प्रकार है :-

"सर्वाणि तत्र भूतानि, वसन्ति परमात्मनि।
भूतेषु च स सर्वात्मा, वासुदेवस्तत: स्मृत:॥"

उस परमात्मा में ही समस्त प्राणी बसते हैं और वे स्वयं भी सबके आत्मा रूप से सकल भूतों में विराजमान है, इसलिये उन्हें वासुदेव कहते हैं।

अत: मेरी आकांक्षा है परम् पूज्य गुरुजी हमारा सतत् मार्ग प्रदर्शन करते रहें। उनका हम सभी गुरू भाई – बहनों को सशरीर दर्शन भी सतत् मिलता रहे।

– शिवचन्द्र झा
जनता क्वार्टर क्रमांक पी. / ८,
पद्मनाभपुर, दुर्ग– (म. प्र.)
पिन कोड क्रमांक– ४९१००१

※ ※ ※

(०) सत्गुरू, सत्पुरूष के आदेशानुसार 'देशबन्धस्य चित्तस्य धारण'-जिस जगह कहा जाय, जहां लक्ष्य लगाने कहा जाय वहां लक्ष्य लगावो और बिना संदेह, शंका व संशय के आदेश का पालन करते तो 'नव द्वारे पुरे देह' उष (ओष:) ओश शब्द से ओशा बना है। ओश माने है ओट। सत्गुरू के आदेशानुसार करने पर वो उसी प्रकार ओट देता है जैसे सूर्य अपने प्रभाव से किरणों के द्वारा अन्धकार को दूर कर प्रकाश को ओट देता है।

※ ※ ※

शरीर में झटके

पूज्यनीय गुरूजी के बतलाये नियमों के अनुसार एक दिन ध्यान में एक लम्बी सकरी गुफा दिखी थी। उसमें बहुत प्रकाश था। कभी कभी ध्यान में शरीर पर झटके से लगते हैं। ध्यान के समय शरीर बहुत छोटा होता हुआ महसूस होता है। एक दिन स्वयं का बहुत छोटा रूप हमारे सामने बैठा था। पूज्यनीय गुरूजी से प्रार्थना है कि ध्यान योग में हमारी मदद करें।

– रामबिहारी वर्मा
"डिलाइट टेलर्स"
चिकान रोड, रींवा
(म. प्र.) ४८६००१

ऐसा ही है...

प. पू. गुरूजी के चरणों में साष्टांग प्रणाम,

इसके पहले मुझे जो अनुभव हुआ है वह "दिव्याम्बु निमज्जन" पुस्तक में हैं। चार-पांच साल पहले मुझे हार्ट में तकलीफ हुई और मेरे हाथ की हथेली व पांव के तल्ले ठंडे पड़ गये। फिर मुझे अनुभव हुआ कि प. पू. गुरुजी गुस्से में छड़ी पटकते हुए मेरे पलंग के पास आये। उनकी आवाज मेरी आत्मा से निकली। वे गुस्से से बोले "ऐसा ही है"। उसके बाद प. पू. गुरूजी लुप्त हो गये। मैं करीब तीन घंटे तक बेहोशी की हालत में पड़ी रही। इसी बीच उन्होंने तीन बार दर्शन दिये और तीनों बार "ऐसा ही है" बोले।

इस अनुभव के साल भर बाद गुरूजी की आशीष से मेरे हार्ट का आप्रेशन बाम्बे में छः घंटे तक चलता रहा और इन छः घंटों में मुझे प्रकाश ही प्रकाश दिखाई देता रहा। गुरूजी की आशीष से मेरा आप्रेशन सफल रहा। हास्पीटल में भी मुझे गुरूजी के दर्शन हुए और बीच-बीच में भी उनके दर्शन होते रहते हैं। अब मैं उनकी आशीष से स्वस्थ हूं।

– श्रीमती सुनीता एस. गुप्ता
(धर्म पत्नि श्री सुनील गुप्ता)
मुंगेली (म. प्र.)

अभ्यास करते-करते अगर आप नहीं डरे तो मृत्यु आती है जिसे लांघकर आप तूर्यावस्था में पहुंच सकते हैं। यही कारण शरीर है जिसे Astrol body, Psychic body और बोधमय शरीर कहते हैं। यहां बुद्धि प्रखर हो जाती है। तो ये शरीर है। गीता में दिया है- "नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः, न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।

अनुभव

दीक्षा लेने के कुछ दिन बाद ही ध्यान करते हुए एक गहरी और संकरी सुरंग में ऊं के दर्शन हुए।
उसके बाद बालक रूप में श्री कृष्ण के दर्शन कई दिन तक होते रहे।
काले रंग के शिवलिंग के दर्शन हुए।
फिर शिवलिंग के साथ सर्प भी दिखने लगा।
कुछ दिन बाद आंख बंद करते ही सुनहरे सर्प के दर्शन नियमित रूप से होने लगे।
कुछ दिन सर्प कुंडली मारे दिखाई देता रहा उसके बाद खड़े होने का प्रयत्न करता प्रतीत हुआ।
ध्यान करते समय नारंगी रंग का प्रकाश बहुत बड़े गोले के रूप में दिखता था।
फिर सूक्ष्म होता हुआ भौंहों के मध्य समाता प्रतीत हुआ।
एक दिन शिवलिंग के ऊपर ऊं के दर्शन हुए।
एक दिन सफेद दीवार के ऊपर ऊं के दर्शन हुए।
उसके कई दिन बाद ऊं सफेद या नारंगी रंग में दर्शित हुआ।
कभी सूक्ष्म रूप में, कभी आकार बढ़ना प्रतीत हुआ।
एक दिन सफेद घोड़ों से जुता हुआ सफेद रंग का रथ जिसे एक सफेद दिव्याकृति चला रही थी, दिखा। कुछ देर बाद रथ पास आकर रुका और दिव्य पुरुष आकृति नीचे उतर कर आई। कुछ देर खड़े रहने के पश्चात रथ वापस चला गया।
कुछ दिन बाद सफेद रंग के हाथी के अग्रभाग के दर्शन होते रहे फिर पूरा हाथी दिखाई दिया।
एक दिन पूज्य गुरुजी और उनके पास बैठे बालक कृष्ण के दर्शन हुए।
फिर काफी दिन तक कुछ भी दिखना बन्द हो गया, बस कभी-कभी प्रकाश के दर्शन अवश्य होते रहे फिर वो भी दिखना बंद हो गया।
कुछ दिन ७ नं. के दर्शन होते रहे।
एक दिन अग्नि जलती हुई दिखाई दी, फिर कई बार अग्नि के दर्शन होते रहे।
दो तीन दिन पहले भौंहों के मध्य एक त्रिभुजाकार आकृति में से अग्नि निकलती हुई दिखाई दी जो कि बांयी ओर बहती हुई प्रतीत हुई।

— अंजू दीक्षित
द्वारा - श्री आर. एल. दीक्षित
कन्या महाविद्यालय के सामने,
मुरार, ग्वालियर - ४७४००६ (म. प्र.)

"उद्बोधन" पत्रिका के प्रकाशन हेतु गुरू परिवार से प्राप्त सहयोग

अनुक्रमांक	नाम		सहयोग राशि
१–	शर्मा फोटो स्टुडियो, रायपुर	–	रू. १००१.००
२–	श्री हरीश गुप्ता, रायपुर	–	,, ६००.००
३–	,, गौतम सिह, रायपुर	–	,, ५०१.००
४–	,, रानूलाल जी बंगानी, धमतरी	–	,, ५००.००
५–	डॉ. प्र. वि. आचार्य, रायपुर	–	,, ५००.००
६–	डॉ. (श्रीमती) के. के. पधेर, ग्वालियर	–	,, ५००.००
७–	श्री जुगल किशोर, रायपुर	–	,, ५००.००
८–	,, राकेश यादव, रायपुर	–	,, २५१.००
९–	,, पी. पी. गुप्ता, रायपुर	–	,, २५०.००
१०–	,, मनोहर तेजवानी, रायपुर	–	,, २०१.००
११–	,, अशोक साइरानी, नवापारा-राजिम	–	,, २०१.००
१२–	डॉ. टो. एन. मेहरोत्रा, रायपुर	–	,, २००.००
१३–	डॉ. टी. के. बेनर्जी, रायपुर	–	,, २०० ००
१४–	डॉ. सी. एम. वर्मा, रायपुर	–	,, २००.००
१५–	डॉ. सूरज अग्रवाल, रायपुर	–	,, २००.००
१६–	डॉ. एस. के. एम. दास, रायपुर	–	,, २००.००
१७–	श्रीमती फरहत तालिब, बुरहानपुर	–	,, १५१.००
१८–	श्री आर. सी. मिश्र, रायपुर	–	,, १०१.००
१९–	श्री विपिन जैन, रायपुर	–	,, १०१.००
२०–	डॉ. सी. एल. गोगल, रायपुर	–	,, १०१.००
२१–	श्री शेष नारायण सिंह, रायपुर	–	,, १०१.००
२२–	,, धनराज वर्मा, रायपुर	–	,, १०१.००
२३–	,, हरी किशन सोनी, रायपुर	–	,, १०१.००
२४–	,, ईश्वरलाल देवांगन, नवापारा-राजिम	–	,, १०१.००
२५–	,, बी. एस. वैष्णव, रायपुर	–	,, १००.००
२६–	,, कन्हैया इसरानी, नवापारा-राजिम	–	,, १००-००
२७–	,, खांगामल तेजवानी, नवापारा-राजिम	–	,, ५१.००
२८–	,, सुगनामल तेजवानी, नवापारा-राजिम	–	,, ५०.००
२९–	,, गोविन्दराम वर्मा, रायपुर	–	,, ५०.००
३०–	,, ब्रह्मदत्त शर्मा, नवापारा-राजिम	–	,, ३१.००
३१–	,, वीरभान वर्मा, नवापारा-राजिम	–	,, २५.००

सहयोग के लिये धन्यवाद !

श्री वासुदेव योग आश्रम
बड़ा बाजार, मुंगेली - ४९५ ३३४

श्री वासुदेव योगाश्रम, बड़ा बाजार, मुंगेली (बिलासपुर)

सतगुरू परिवार, रायपुर द्वारा प्रकाशित

सहयोग राशि ११/- रूपए

मुद्रक : श्रीवा प्रिंटिंग प्रेस, सत्तीबाजार, रायपुर (म. प्र.)